

पेतसहस्राब्दोनपूर्वकं ॥३२२॥ लक्ष्म कैलासमासाद्य श्रीसिद्धशिखरांतरे । पौर्णमासीदिने पौषे निरिच्छः समुपाविशत् ॥३२३॥ तदा भरतराजेद्रो महामंदरभूधरं । आप्राग्भारं व्यलोकिष्ट स्वप्ने देधर्येण संस्थितं ॥३२४॥ तदैव युवराजोऽपि स्वगदित्य महौषधिः । द्रुमश्छित्वा नृणां जन्मरोगं स्वर्यान्तमैक्षत ॥३२५॥ कल्पद्रुममधीष्टार्थं दत्वा नृभ्यो निरंतरं । गृहेद निशामयामास स्वर्गप्राप्तिसमुद्यतं ॥३२६॥ रत्नद्वीपं जिघृक्षुभ्यो नानारत्नकदंबकं । प्रादायाभ्रगमोद्युक्तमद्राक्षीत्सचिवाग्रिमः ॥३२७॥ वज्रपंजरमुद्दिद्य कैलासं गणवैरिणं । उल्लंघयितुमुद्यंतं सेनापतिमपश्यत ॥३२८॥ आलुलोके बुधोऽनंतवीर्यः श्रीमान् जयात्मजः । यान्तं त्रैलोक्यमाभास्य सतारं तारकेश्वरं ॥३२९॥ यशस्वतीसुनंदाभ्यां सार्वं शक्रमनःप्रिया । शोचंती-श्विरमद्राक्षीत्सुभद्रा स्वप्नगोचरा ॥३३०॥ वाराणसीपतिश्वित्रांगदोऽप्यालोकताकुलः । खमुत्पतंतं भास्वंतं प्रकाश्य धरणीतलं ॥३३१॥ एवं आलोकितस्वप्ना राजराजपुरस्सराः । पुरोधसं फलं तेषामपृच्छन्नर्यमोदये ॥३३२॥ कर्माणि हृत्वा निर्मूलं मुनिभिर्बहुभिः समं । पुरोः सर्वेऽपि शंसंति स्वप्नाः स्वर्गप्रिणामितां ॥३३३॥ इति स्वप्नफलं तेषां भाषमाणे पुरोहिते । तदैवानंदनामैत्य भर्तुः स्थितिमवेद्यत् ॥३३४॥ ध्वनौ भगवता दिव्ये संहृते मुकुलीभवत् ! करांबुजा सभा जाता पूष्णीव सरसीत्यससौ ॥३३५॥ तदाकर्णन्मात्रेण सत्वरः सर्वसंगतः । चक्रवर्ती तमभ्येत्य त्रिःपरीत्य कृतस्तुतिः ॥३३६॥ महामहापूजां भक्त्या निरवर्तयन्स्वयं । चतुर्दश दिनान्येवं भगवंतमसेवत ॥३३७॥ माघकृष्णचतुर्दश्यां भगवान्

का बीज बोया और धर्मवृष्टि के द्वारा उसे संचा ॥३२१॥ सज्जनों को मोक्षरूप उत्तम फल मिलने के लिये उन्होंने अपने गणधरों के साथ-साथ एक हजार वर्ष और चौदह दिन कम एक लाख पूर्व विहार किया । (उनकी चौरासी लाख पूर्व की आयु थी उसमें से बीस लाख पूर्व कुमार काल के, तिरसठलाख पूर्व राज्य अवस्था के, एक हजार वर्ष तपश्चरण के, एक हजार वर्ष और चौदह दिन कम एक लाख पूर्व विहार के और चौदह दिन योगनिरोध के थे) जब आयु के चौदह दिन बाकी रहे तब योगों का निरोधकर पोष शुक्ल पौर्णमासी के दिन श्रीशिखर और सिद्धशिखर के बीच में कैलास पर्वत पर पद्मासन से विराजमान हुये ॥३२२-३२३॥ जिस दिन भगवान् योग निरोधकर कैलास पर विराजमान हुये उसी दिन महाराज भरत ने स्वप्न में देखा कि सुमे�खपर्वत लम्बा होकर सिद्धक्षेत्र तक पहुँच गया है ॥३२४॥ उसी दिन युवराज अर्ककीर्ति ने भी स्वप्न में देखा कि एक महौषधि का पेड स्वर्ग से आया था और मनुष्यों का जन्म रोग नष्टकर फिर स्वर्ग में चला गया ॥३२५॥ उसी दिन गृहपति ने देखा कि एक कल्पवृक्ष लोगों को सदा उनकी इच्छानुसार पदार्थ देता था परन्तु अब वह स्वर्ग जाने के लिये तैयार हुआ है ॥३२६॥ मुख्यमंत्री ने स्वप्न में देखा कि एक रत्नद्वीप चाहनेवाले लोगों के लिये अनेक तरह के रत्नसमूह देकर अब आकाश में जाने के लिये तैयार हुआ है ॥३२७॥ सेनापतिने देखा कि एक सिंह वज्र के पिंजडे को तोड़कर कैलास पर्वत को उल्लंघन करने के लिये तैयार हुआ है ॥३२८॥ जयकुमार के पुत्र श्रीमान् बुद्धिमान अनंतवीर्य ने स्वप्न में देखा कि चंद्रमा तीनों लोकों को प्रकाशकर ताराओं सहित जा रहा है ॥३२९॥ चक्रवर्ती की रानी सुभद्रा ने स्वप्न में देखा कि श्री ऋषभदेव की रानी यशस्वती और सुनंदा के साथ-साथ बैठी हुई इन्द्राणी बहुत देर तक शोक कर रही है ॥३३०॥ बनारस के राजा चित्रांगद ने भी व्याकुल होकर यह स्वप्न देखा कि सूर्य पृथ्वी का प्रकाश कर आकाश की ओर उडा जा रहा है ॥३३१॥ इस तरह भरतादि को लेकर सब लोगोंने स्वप्न देखे और सूर्योदय होते ही पुरोहित से उनके फल पूछे ॥३३२॥ पुरोहित ने कहा कि ये सब स्वप्न यहीं सूचित करते हैं कि भगवान् वृषभदेव सब कर्मों को बिल्कुल नाशकर अनेक मनियों के साथ-साथ मोक्ष पथारेंगे ॥३३३॥ पुरोहित इन सब स्वप्नों का फल कह ही रहा था कि इतनेमें ही आनंद नाम का एक मनुष्य आया और उसने भगवान् वृषभदेव की सब हालत कही ॥३३४॥ उसने कहा कि जिस प्रकार सूर्य के अस्त हो जाने पर सरोवर के कमल सब मुकुलित हो जाते हैं उसी प्रकार भगवान की दिव्यध्वनि बंद हो जाने पर सब सभा हाथ जोड़े हुये मुकुलित हो रही है ॥३३५॥ यह समाचार सुनकर वह चक्रवर्ती बहुत ही शीघ्र सब लोगों के साथ-साथ कैलास पर्वत पर पहुँचा, उसने जाकर भगवान् की तीन प्रदक्षिणायें दीं, स्तुति की, भक्तिपूर्वक अपने हाथ से महामह नाम

भास्करोदये । मुहूर्तेऽभिजिति प्राप्तपल्यंको मुनिभिः समं ॥३३८॥ प्राणिडमुखस्तृतीयेन शुक्लध्यानेन सूद्धवान् । योगन्त्रितयमत्येन ध्यानेनाघातिकर्मणां ॥३३९॥ पंचहस्वस्वरोच्चारणप्रमाणेन संक्षयं । कालेन विद्धत्प्रांतगुणस्थानमधिष्ठितः ॥३४०॥ शरीरत्रितयापाये प्राप्य सिद्धत्वपर्ययं । निजाष्टगुणसंपूर्णः क्षणात्तनुवातकः ॥३४१॥ नित्यो निरंजनः किंचिदूनो देहादभूर्तिभाक् । स्थितः स्वसुखसादभूतः पश्यन्विश्वमनारतं ॥३४२॥ तदाऽगत्य सुराः सर्वे; प्रांतपूजाचिकीर्षया । पवित्रं परमं मोक्षसाधनं शुचि निर्मलं ॥३४३॥ शरीरं भर्तुरस्येति पराद्धर्यशिबिकार्पितं । अग्नीद्ररत्नभा-भासिप्रोत्तुं झुमुकुटोदभूता ॥३४४॥ चंदनागरु-कर्पूरपारीकामीरजादिभिः । घृतक्षीरादिभिश्चाप्त वृद्धिना हुतभोजिना ॥३४५॥ जगद्गृहस्य सौंगंध्यं संपाद्याभूतपूर्वकं । तदाकारोपमर्देन पर्यायांतरमानयन् ॥३४६॥ अभ्यर्चितामश्चिकुंडस्य गंधपुष्पादिभिस्तथा । तस्य दक्षिणभागेऽभूदगणभृत्संस्क्रियानलं ॥३४७॥ तस्यापरस्मिन् दिग्भागे शेषकेवलिकायगः । एवं वन्हित्रयं भूमाववस्थाप्यामरेश्वराः ॥३४८॥ ततो भस्म समादाय पंचकल्याणभागिनः । वयं चैव भवामेति स्वललाटे भुजद्वये ॥३४९॥ कंठे हृदयदेशे च तेन संस्पृश्य भक्तिः । तत्पवित्रतमं मत्वा धर्मरागरसाहिताः ॥३५०॥ तोषात्सपादयामांसुः संभूयानंदनाटकं । सम्मोपांसकाद्यास्ते सर्वेऽपि ब्रह्मचारिणः ॥३५१॥ गार्हपत्यामिध, पूर्वं परमाहवनीयकं । दक्षिणाग्निं ततो न्यस्य संध्यासु तिसृषु स्वयं ॥३५२॥ तच्छिखित्रयसांन्विध्ये चक्रमातपवारणं ।

की महापूजा की और इसी तरह चौदह दिन तक भगवान की सेवा की ॥३३६-३३७॥ माघकृष्णा चतुर्दशी के दिन सूर्योदय के शुभ मुहूर्त और अभिजित नक्षत्र में भगवान् वृषभदेव ने पूर्व दिशा की ओर मुँहकर अनेक मुनियों के साथ-साथ पर्यंकासन विराजमान हुये, उन्होंने तीसरे सूक्ष्म-क्रियाप्रतिपाति नाम के शुक्ल ध्यान से मन बचन काय तीनों योगों का निरोध किया और फिर अंत के चौदहवें गुणस्थान में ठहरकर जितनी देर में अ, इ, उ, ऋ, लृ, इन पाँच हस्त अक्षरों का उच्चारण होता है उतने ही समय में चौथे व्युपरत क्रियानिवृत्ति नाम के शुक्लध्यान से वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र इन चारों अघाति कर्मों का नाश किया ॥३३८-३४०॥ औदारिक, तैजस, कार्मण इन तीनों शरीरों के नाश होनेसे उन्हें सिद्ध पर्याय प्राप्त हुई, सम्यक्त्व ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सुख, सूक्ष्मत्व, अव्याबाध और अवगाहनत्व ये निजके आठ गुण पूरे-पूरे प्रकट हो गये, क्षणभर में ही (उसी समय में) तनुवात वलय में जा पहुँचे तथा वहाँ पर नित्य, निरंजन, अपने शरीर से कुछ कम, अमूर्त, आत्मा से उत्पन्न हुये सुख में तल्लीन और निरंतर संसार को देखते हुये बिराजमान हुये ॥३४१-३४२॥ उसी समय मोक्षकल्याण की पूजा करने की इच्छा करते हुये सब देव आये, उन्होंने पवित्र, उत्कृष्ट, मोक्ष का साधन, स्वच्छ और निर्मल ऐसे भगवान के शरीर को बहुमूल्य पालकी में विराजमान किया । तदनन्तर जो अश्विकुमार जाति के देवों के इंद्र के रत्नों की कांति से देवीप्यमान ऐसे बडे भारी मुकुट से उत्पन्न हुई है तथा चँदन, अगर, कपूर, केशर आदि सुगन्धित पदार्थों से और धी दूध आदि से बढाई गई है ऐसी अश्वि से जो पहिले कभी देखने सुनने में नहीं आई ऐसी जगत्रूपी धर की सुगंधी प्रगटकर उस शरीर का पहिला आकार नष्टकर दूसरा आकार बना दिया अर्थात् उसे भस्म कर दिया ॥३४३-३४६॥ गँथ, पुष्प आदि द्रव्यों से उस अश्विकुंड की पूजा की तथा उसके दर्ढ़ी ओर गणधर देवों के शरीर का अश्विसंस्कार किया और बाँई ओर तीर्थकर तथा गणधरों को छोडकर बाकी बचे हुये केवलज्ञानियों के शरीर का अश्विसंस्कार किया । इस तरह इन्द्र ने पृथ्वी पर तीन तरह की वहि स्थापित की ॥३४७-३४८॥ तदनंतर सब देव और इन्द्रोंने बड़ी भक्ति से जिनके पाँचों कल्याणक हुये हैं ऐसे तीर्थकर भगवान् वृषभदेव के शरीर की भस्म उठाई और “हम भी ऐसे हों” यही सोचकर अपने माथे पर, दोनों भुजाओं में, गले में और छाती पर लगाई । उन्होंने वह भस्म बड़ी ही पवित्र मानी और उसे लगाकर, वे धर्म के रस में डूब गये ॥३४९-३५०॥ संतुष्ट होकर सबने मिलकर आनन्द नाटक किया और फिर उन्होंने श्रावकों को उपदेश दिया कि “तुम लोगों में से सातवें उपासकाध्ययन को पढ़नेवाले जो सात, आठ, नौ दश, ज्यारहवीं प्रतिमा के ब्रह्मचारी हैं उन्हें वे गार्हपत्य, परमाहवनीयक और दक्षिणाश्वि ये तीन अश्विकुण्ड बनाने चाहियें और उनमें सबेरे, दुपहर तथा शाम

जिनेन्द्रप्रतिमाचैवास्थाप्य मंत्रपुरत्सरं ॥३५३॥ तास्तिकालं समभ्यर्च्य गृहस्थैर्विहितादराः । भवतातिथयो यूयमित्याचख्युरुपासकान् ॥३५४॥ स्नेहेनेष्टवियोगोत्थः प्रदीप्तः शोकपावकः । तदा प्रबुद्धमप्यस्य चेतोऽधाक्षीदधीशितुः ॥३५५॥ गणी वृषभसेनाख्यस्तच्छोकापनिनीषया । प्राकंस्त वक्तुं सर्वेषां स्वेषां व्यक्तां भवावलीम् ॥३५६॥ जयवर्मा भवे पूर्वे द्वितीयेऽभून्महाबलः तृतीये ललितांगख्यो वज्रजंधश्वतुथके ॥३५७॥ पंचमे भोगभूजोऽभूत षष्ठेऽयं श्रीघरोऽमरः । सप्तमे-सुविधिःक्षमाभृदष्टमेऽच्युतनायकः ॥३५८॥ नवमे वज्रनाभीशो दशमेऽनुत्तरांत्यजः । ततोऽवतीर्य सर्वेन्द्रवंदिते वृषभोऽभवत् ॥३५९॥ धनश्रीरादिमे जन्मन्यतो निर्णायिकां ततः । स्वयंप्रभा ततस्तस्माच्छ्रीमत्यार्या ततोऽभवत् ॥३६०॥ स्वयंप्रभः सुरस्तस्मादस्मादपि च केशवः । ततः प्रतीन्द्रयस्तस्माच्च धनदत्तोऽहमिन्द्रतां ॥३६१॥ गतस्ततस्ततः श्रेयान् दानतीर्थस्य नायकः । आश्र्वयपंचकस्यपि प्रथमोऽभूतप्रवर्तकः ॥३६२॥ अतिगृद्धः पुरा पश्चान्नारकोऽनु चमूरकः । दिवाकरप्रभो देवस्तथा मतिवराह्यः ॥३६३॥ ततोऽहमिन्द्रस्तस्माच्च सुबाहुरहमिन्द्रतां । प्राप्य त्वं भरतो जातः षट्खंडाखंडपालकः ॥३६४॥

इन तीनों संध्याओं में स्वयं इन तीनों अग्नियों की स्थापना करनी चाहिये । उन तीनों अग्नियों के समीप ही चक्र, छत्र तथा श्री जिनेन्द्रदेव की स्थापना करनी चाहिये और तीनों समय मंत्र पूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिये । इस तरह गृहस्थों के द्वारा आदर-सत्कार पाते हुये लोग अतिथि बनो । यह सब उपदेश इन्द्रने ब्रह्मचारियों को दिया ॥३५१-३५४॥ उस समय इष्ट के वियोग से उत्पन्न हुई और स्नेह से बढ़ी हुई भरत की शोकरूपी अग्नि जग उठी थी और वह उनके प्रबुद्ध हुए चित्त को भी जला रही थी ॥३५५॥ तब श्री वृषभसेन गणधर भरत के शोक को दूर करने की इच्छा से अपने सब लोगों के पहिले भव स्पष्ट रीति से कहने लगे ॥३५६॥ कि श्री वृषभदेव का जीव पहिले जयवर्मा था, दूसरे जन्म में राजा महाबल हुआ, तीसरे भव में ललितांग देव हुआ और चौथे भव में राजा सुविधि हुआ और आठवें भव में भोगभूमि में उत्पन्न हुआ, छठे में श्रीधर देव हुआ, सातवें में राजा वज्रजंघ हुआ ॥३५७॥ पाँचवें भव में भोगभूमि में उत्पन्न हुआ, छठे में श्रीधर देव हुआ, सातवें में राजा सुविधि हुआ, और आठवें भव में अच्युतस्वर्ग का इन्द्र हुआ ॥३५८॥ नौवें भव में राजा वज्रनाभि हुआ, दशवें भव में सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुआ और वहाँ से आकर सब इन्द्रों के द्वारा पूज्य ऐसा श्री वृषभदेव हुआ है ॥३५९॥ श्रेयानक जीव पहिले धनश्री था, दूसरे जन्म नैं निर्णायिका, तीसरे भव में स्वयंप्रभा देवी, चौथे भव में वज्रजंघ की रानी श्रीमती, पाँचवें भव में भोगभूमि में आर्या, छठे भव में स्वयंप्रभदेव, वहाँ से आकर सातवें भव में राजा सुविधि का पुत्र केशव, आठवें भव में सोलहवें स्वर्ग में प्रतीन्द्र, नौवें भव में वज्रनाभिचक्रवर्ती का गृहपति रत्न धनदत्त और फिर दशवें भव में अहमिन्द्र हुआ ॥३६०-३६१॥ वहाँ से आकर दानतीर्थ की प्रवृत्ति करनेवाला और पंचाश्र्वय का स्वामी यह राजा श्रेयान् हुआ ॥३६२॥ तेरा जीव पहिले राजा अतिगृद्ध था । दूसरे जन्म में नरक गया, तीसरे भव में सिंह, चौथे में दिवाकरप्रभ नाम का देव और पाँचवें भव में राजा वज्रजंघ का मतिवर नामका मंत्री हुआ था ॥३६३॥ छठे भव में अहमिन्द्र, सातवें भव में वज्रनाभि चक्रवर्ती का छोटा भाई सुबाहु हुआ । आठवें भव में अहमिन्द्र पद पाकर नौवें भव में छहों खण्ड पृथ्वी का पालन करनेवाला राजा भरत हुआ है ॥३६४॥



॥ पुराणसार संग्रह ॥

विगत : ऋषभदेवनुं तैलास उपर निर्वाणो उल्लेख

प्रस्तावना :

पुराणसार संग्रह सकलकीर्ति भट्टारक कृत दिगंबर साहित्यनो अनुपम ग्रंथ છે. તેના પાંચમાં સર્ગમાં ભગવાન ઋषભદેવના જીવન વિષયક માહિતી જોવા મળે છે.

पञ्चમः सर्गः

जिनेन्द्रोऽपि हितं धर्मं प्रजाभ्यो देशयन्महीम्।
तारयंश्च बहून्भव्यान् विजहार निरञ्जनः ॥१॥

आसंश्रुशीतिश्च गणा ‘गणभृतोऽपि च।
तावन्त्येव सहस्राणि मुनीनां मोक्षकाङ्गणाम् ॥२॥

आर्थिकाणां सहस्राणि त्रिंशद् दशगुणानि तु।
तथोक्तानि तु पञ्चाशत्सहस्राण्यथिकानि च ॥३॥

श्रावकाणां सहस्राणि त्रिंशद् दशगुणानि तु।
श्राविकाणां प्रमाणं तु सहस्रैः शतपञ्चकैः ॥४॥

ययुः पूर्वसहस्राणि शताभ्यस्तानि विंशतिः।
कौमारेऽतस्त्रयः षष्ठिः राज्यस्यैकं च संयमे ॥५॥

उत्कश—

सप्ततिलक्षा कोटिः पट्पश्चाशत्सहस्रसंयुक्ता।
पूर्वस्य तु प्रमाणं बोद्धव्या वर्षकोटीनाम् ॥६॥

॥७०५६०००००००००००॥

नक्षत्रं चोत्तराषाढं माझल्येषु च सप्तसु।
निर्वाणमभिजियोगे पुरुदेवस्य पूज्यते ॥७॥

उत्कश—

स्वर्गावतरणं जन्म विवाहराज्याभिषेकनिःक्रमणम्।
केवलबोधो निर्वाणं सप्त च मङ्गलानि पुरोः ॥८॥

अथाऽन्तेऽष्टापदं शैलं देवेन्द्रैर्बहुशोऽचितः ।
 चतुर्विधेन संघेन सहारुद्य जिनेश्वरः ॥१॥
 सहस्रैर्दशभिः सार्वमृषिभिः सन्निविष्टवान् ।
 चतुर्दशदिनादूर्ध्वं प्राप्य स्थानं चतुर्दशम् ॥२॥
 पूर्वाह्वि शेषकर्मान्तं कृत्वा लोकं प्रकम्पयन् ।
 अव्याबाधं सुखं क्षेमं सम्प्राप्तपरमं पदम् ॥३॥
 ततः सदेविका इन्द्रा आगम्य चतुरष्टकाः ।
 शरीरमाहिमां तस्य महर्ध्या चकुरन्तिमाम् ॥४॥

उक्तश्च—

दशभवनेन्द्रा द्वादश कल्पेन्द्रा व्यन्तराऽमरेन्द्रास्त्वष्टौ ।
 ज्योतिष्केन्द्रौ द्वाविति द्वात्रिंशत्समिता इन्द्राः ॥५॥
 राजराजोऽपि तज्जात्वा स्वप्नैरुक्तः पुरोधसा ।
 ससैन्यस्तूर्णमागत्य जिनदेहमपूजयन् ॥६॥
 ततोऽग्नीन्द्रकिरीटस्थचूडामणिजवहिना ।
 दग्धवा निर्वाप्य तद्देहं गन्धाम्बुकुसुमाक्षतैः ॥७॥
 गणेशामार्घभाणाश्च चितां संस्कृत्य दक्षिणे ।
 शेषाणां वामके पाश्वे त्रीनप्यग्नीन् समर्चयत् ॥८॥
 अथेन्द्रा नृपतीन्द्राय कृत्वा हस्तप्रसारणम् ।
 आश्वास्याभाष्य मधुरं गणेशस्तं समर्पयन् ॥९॥
 ततो वृषभसेनस्तं विलपन्तं वियोगतः ।
 अनुशास्ति स्म राजेन्द्रमितिहासमिमं ब्रुवन् ॥१०॥
 अस्माकमर्हतश्चापि सम्बन्धं श्रृणु राजराट् ।
 चित्रसंसारकान्तारे भवादारब्धमाप्तवान् ॥११॥
 यदासीद् वज्रजङ्घोऽयं भगवानष्टमे भवे ।
 तदा मतिवरो मन्त्री तस्याभूस्त्वं हिते रतः ॥१२॥
 सैन्येशोऽकम्पनो यश्च सोऽयं बाहुबली नृपः ।
 स्वसा याऽनुन्दरी तस्य सेयं ब्राह्मी तव स्वसा ॥१३॥
 योऽभूदानन्दपुरोधा स इह सुन्दरसुन्दरी ।
 पुत्रा ये वीरबाह्याद्याः श्रीमत्यास्ते वयं नृपेट् ॥१४॥
 वयं कृत्वा तपः सम्यगाराधितचतुष्टयाः ।
 आद्यग्रैवेयके सर्वे चाहमिन्द्रा बभूविम ॥१५॥

(क्रमशः)

पुराणसार संग्रह : पञ्चम सर्ग (गाथार्थ)

- * कर्ममलरहित जिनेन्द्र आदिनाथ भगवान् भी प्रजा के लिए हितकारी धर्म का उपदेश करते हुए तथा बहुतसे भव्यों को तारते हुए पृथ्वि पर विहार करने लगे ॥१॥
- * उनके समवशरण में ८४ गण थे तथा चौरासी ही गणधर थे और उतने ही हजार मोक्ष चाहनेवाले मुनि थे। आर्यिका भी तीन लाख पचास हजार थीं। और श्रावक तीन लाख प्रमाण थे। श्राविकाओं की संख्या पाँच लाख थी। भगवान् का बीस लाख पूर्व वर्ष कुमार काल में, तिरेसठ लाख पूर्व वर्ष राज्य-काल में तथा एक लाख पूर्व वर्ष संयम काल में बीता ॥२-५॥
- * कहा भी है—सत्तर लाख छप्पन हजार कोड़ाकोडि वर्ष प्रमाण पूर्व होता है ॥६॥
- * उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में तथा अभिजित् योग में सात मांगल्य युक्त भगवान् के निर्वाण पद की पूजा की गई ॥७॥
- * कहा भी है— (१) स्वर्गावितरण, (२) जन्म कल्याणक, (३) विवाह, (४) राज्याभिषेक, (५) दीक्षा कल्याणक, (६) केवलज्ञान कल्याणक और (७) निर्वाण कल्याणक ये सात भगवान् ऋषभदेव के माझल्य हैं ॥८॥
- * देवेन्द्रों के द्वारा नाना प्रकार से पूजित वे भगवान् चार प्रकार के संघ सहित कैलाश पर्वत पर आरूढ़ हुए ॥९॥
- * वहाँ दश हजार साधुओं के साथ उन्होंने समाधि लगाई। तथा चौदह दिनों के बाद चौदहवें गुणस्थान को प्राप्त हुए ॥१०॥
- * उन्होंने प्रातःकाल ही शेष कर्मों का अन्त कर लोक को कंपाते हुए, अव्याबाध सुखवाले कल्याणकारी मोक्ष पद को पाया ॥११॥
- * तब अपनी देवियों सहित बत्तीस इन्द्रों ने परिवार सहित आकर बड़े ठाट-बाट से भगवान् का निर्वाण कल्याणक किया ॥१२॥
- * कहा भी है— भवनवासी देवों के दस इन्द्र, कल्पवासी देवों के बारह इन्द्र, व्यन्तर देवों के आठ इन्द्र तथा ज्योतिषियों के दो इन्द्र, इस प्रकार मिलकर बत्तीस इन्द्र होते हैं ॥१३॥
- * चक्रवर्ती को अपने पुरोहित द्वारा स्वप्न के फलस्वरूप भगवान् के निर्वाण की सूचना मिली जिससे सैन्यसहित शीघ्र आकर उन्होंने निर्वाण कल्याणक की पूजा की ॥१४॥
- * तब अग्निकुमार देवों के इन्द्र के मुकुट में लगे हुए चूडामणि रत्न की अग्नि से, सुगन्धित जल, पुष्प और अक्षतों से सिंश्रित उनकी देह का दाह संस्कार किया ॥१५॥
- * वृषभसेन आदि गणधरों की अग्नि को दक्षिण भाग में तथा अन्य मुनियों कि अग्नि को वाम भाग में स्थापित कर गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि तथा आहवनीय अग्नि की उन लोगों ने पूजा की ॥१६॥
- * इसके बाद इन्द्रों ने चक्रवर्ती भरत को हाथ फैलाकर आश्वासन दिया तथा मधुरालाप कर गणधरों को उन्हें सौंप दिया ॥१७॥

- * तब वृषभसेन गणधर ने वियोग से विलाप करते हुए उस चक्रवर्ती को समझाया और सब लोगों का पूर्व वृतान्त कहा ॥१८॥
- * हे चक्रवर्ती ! हम सबका और भगवान् आदिनाथ का सम्बन्ध सुनो। जो इस विचित्र संसार रूपी जंगल में अनेक भवों में घूमते हुए प्राप्त हुआ ॥१९॥
- * जब आठ भव पहले भगवान् वज्रजंघ थे तब तुम उनके हितकारी मतिवर नामके मंत्री थे। जो उनका अकम्पन नामका मंत्री था वह बाहुबली राजा हुआ और उसकी जो अनुन्दरी नामकी बहिन थी वह तुम्हारी ब्राह्मी नामकी बहिन हुई है ॥२०-२१॥
- * जो आनन्द नामका पुरोषित था वह सुन्दरी नामकी बहिन हुई है और श्रीमती के जो वीरबाहु आदि पुत्र थे वे सब हम लोग हुए हैं ॥२२॥
- * हम लोगों ने, तपकर तथा चार आराधनाओं का आराधनकर आद्य ग्रैवेयक में अहमिन्द्र पद पाया था ॥२३॥



॥ શ્રી ગૌતમ અષ્ટક ॥

પ્રસ્તાવના :

ગૌતમ અષ્ટકના કર્તા અજાત છે. તેમાં અનંતલબ્ધિનિધાન શ્રી ગૌતમસ્વામીનું વિશિષ્ટ મહાત્મ્ય વર્ણવી, વાંછિતની ગ્રાસ્તિની પ્રાર્થના કરવામાં આવી છે.

શ્રી ઈંદ્રભૂતિ વસુભૂતિપુત્રં, પૃથ્વીભવં ગૌતમગોત્રરત્નમ્;
સ્તુવન્તિ દેવાઃ સુરમાનવેન્દ્રાઃ સ ગૌતમો યચ્છતુ વાંછિતં મે । (૧)

શ્રી ઈંદ્રભૂતિ વસુભૂતિ અને પૃથ્વી માતાના પુત્ર, ગૌતમ ગોત્રમાં થયેલા છે. સુરો અને માનવો વડે સ્તુતિ કરાયેલા ગૌતમસ્વામી મને વાંછિત આપો. (૧)

શ્રીવર્દ્ધમાનાત् ત્રિપદીમવાય, મુહૂર્તમાત્રેણ કૃતાનિ યેન;
અંગાનિ પૂર્વાણિ યતુર્દશાપિ, સ ગૌતમો યચ્છતુ વાંછિતં મે । (૨)

શ્રી વર્ધમાનસ્વામી પાસેથી ત્રિપદીને ગ્રહણ કરીને ૧૪ પૂર્વાણી રચના કરી તેવા ગૌતમસ્વામી મને ... (૨)

શ્રી વીરનાથેન પુરા પ્રણીતં, મંત્રં મહાનંદસુખાય યસ્ય;
ધ્યાયંત્યમી સૂર્યિવરાઃ સમગ્રાઃ, સ ગૌતમો યચ્છતુ વાંછિતં મે । (૩)

શ્રી મહાવીરસ્વામી વડે પહેલાં કહેવાયેલો મહાનંદ અને સુખને આપનાર મંત્ર, જેનું ધ્યાન સર્વે સૂર્યિવરો કરે છે તે ગૌતમસ્વામી મને... (૩)

યસ્યાભિધાનં મુનયોડપિ સર્વે, ગૃહ્ણણન્તિ ભિક્ષાભ્રમણસ્ય કાલે:
મિષાન્નપાનામબરપૂર્ણકામા; સ ગૌતમો યચ્છતુ વાંછિતં મે । (૪)

જેમનું નામ સર્વે મુનિઓ ભિક્ષાભ્રમણના કાળે ગ્રહણ કરે છે જે મિષાન્ન, પાન, અંબરની દૂષણાને પૂર્ણ કરે છે. તે ગૌતમસ્વામી મને... (૪)

અષ્ટાપદાક્રો ગગને સ્વશક્ત્યા યયૌ જિનાનાં પદવંદનાય:
નિશમ્ય તીર્થાતિશયં સુરેન્ય; સ ગૌતમો યચ્છતુ વાંછિતં મે । (૫)

દેવો પાસેથી તીર્થના અતિશયને સાંભળીને જિનેશ્રોના ચરણને વંદન કરવા માટે ગગનમાં સ્વશક્તિથી અષ્ટાપદ પર્વત પર ગયા તેવા ગૌતમસ્વામી મને... (૫)

त्रिपंचसंज्ञ्या शततापसानां तपःकृशानामपुनर्भवाय;
अक्षीणुलभ्या परमान्नदाता, स गौतमो यच्छतु वांछित मे । (६)

तपथी कृश थयेला १५०० तापसोने अपुनर्भव थवा अक्षीणुलभ्य वेद खीरनुं धान आप्युं तेवा गौतमस्वामी मने... (६)

सदक्षिणं भोजनमेव देयं, साधार्मिकं संघसापर्यगेति;
कैवल्यवस्त्रं प्रदद्वौ मुनीनां, स गौतमो यच्छतु वांछितं मे । (७)

संघनी पूजा माटे साधार्मिकने दक्षिणा सहित भोजन अने मुनिओने केवળज्ञानदृपी वस्त्र आपनारा तेवा गौतमस्वामी मने... (७)

शिवं गते भर्तरि वीरनाथे, युगप्रधानत्वमिद्देव भत्वाः
पट्टाभिषेको विदधे सुरेन्द्रैः स गौतमो यच्छतु वांछितं मे । (८)

भगवान् भोक्षमां गये छते युगप्रधानपाण्याथी देवेन्द्रोऽे जेनो पट्टाभिषेक कर्यो तेवा गौतमस्वामी मने... (८)

त्रैलोक्यबीजं परमेष्ठिबीजं सद्ग्नानबीजं जिनराजबीजं;
यन्नाम योक्त विदधाति सिद्धिं स गौतमो यच्छतु वांछितं मे । (९)

त्रैलोक्यबीज, परमेष्ठिबीज, सद्ग्नाननुं बीज तथा जिनराजना बीज समुं बोलायेलुं जेनुं नाम ज सिद्धिने आपे छे. तेवा गौतमस्वामी मने... (९)

श्रीगौतमस्याष्टकमादरेणा प्रबोधकाले मुनिपुंगवा ये;
पठन्ति ते सूरिपदं सैदैवा - नन्दं लत्पन्ते सुतरां कमेणा । (१०)

जे मुनिओ प्रातःकाणे आठरसहित श्री गौतमअष्टकनो पाठ करे छ तेओ कमे करीने हुंमेशा आनंदरूप सूरिपदने प्राप्त करनारा थाय छे. (१०)



॥ જ્ઞાનપ્રકાશદીપાર્વ ॥

ઉત્તરાર્થ

પ્રસ્તાવના :

‘જ્ઞાનપ્રકાશદીપાર્વ’ મંદિર નિર્માણને લગતો પ્રાચીન સંસ્કૃત ગ્રંથ છે. તેના ભૂળ કર્તા વિશ્વકર્મા છે. પ્રભાશંકર સોમપુરાએ આ ગ્રંથ પર ‘શિલ્પ-પ્રભા’ નામની ગુજરાતી ટીકા રચી છે. આ ગ્રંથ પૂર્વાર્ધ અને ઉત્તરાર્થ એમ બે ભાગોમાં વિભાજિત છે. તેના ઉત્તરાર્થના રુદ્રમાં અધ્યાયમાં અષ્ટાપદનું સ્વરૂપ તથા સિંહનિષદ્ધા પ્રાસાદનું વર્ણન સુપેરે કરવામાં આવ્યું છે.

પ્રથમ તીર્થકર શ્રી ઋષભદેવ સ્વામીના દેહેનો અભિનિતસંસ્કાર અષ્ટાપદ પર્વત ઉપર થયો. ત્યાં ભરત ચક્રવર્તી મહારાજે સિંહનિષદ્ધા નામે પ્રાસાદની રચના વાર્ધકીરતન (શિલ્પી - સ્થપતિ) પાસે કરાવી.

ભરતસ્તત્ર ચ સ્વામિ સંસ્કારાસન્નભૂતલે ।
પ્રાસાદં યોજયામાસ ત્રિગવ્યૂતિસમુચ્છ્યઃ ॥૧॥

નામત: સિંહનિષદ્ધા પદ્માનિર્વાણવેશમન: ।
ઉચ્ચૈર્વાર્દ્ધકીરણેન રત્નાશમાભિરકારયત् ॥૨॥

ભરત ચક્રવર્તીએ શ્રી ઋષભદેવના અભિનિતસંસ્કારના સમીપ ભૂમિ પર ત્રણ ગાઉ ઊંચો અને જાણે મોક્ષ મંદિરની વેદિકા હોય તેવો “સિંહનિષદ્ધા” નામનો પ્રાસાદ રત્નમય પાખાણોથી વાર્ધકીરતન (સ્થપતિ) પાસે કરાવ્યો.

તેની ચારે તરફ પ્રભુના સમવસરણાની જેમ સ્ફટિક રત્નનાં ચાર રમણીય દ્વારો કરાવ્યાં. તે દ્વારોની બંને તરફ શિવલક્ષ્મીના ભંડારની જેવા રત્ન ચંદનના સોળ કળશો રચાવ્યા. દરેક દ્વારની જાણે સાક્ષાત પુણ્ય વલ્લી હોય તેવાં સોળ સોળ રત્નમય તોરણો રચાવ્યાં. ફરતા મંડપના પ્રશસ્તિ લિપિના જેવા અષ્ટમંગળની સોળ સોળ પંક્તિઓ રચી. જાણે ચાર દિગ્પાલોની સભા ત્યાં લાવ્યા હોય તેવા વિશાળ મુખમંડપો રચ્યા. તે ચાર મુખમંડપોની આગળ ચાલતાં શ્રી વલ્લી મંડપની અંદર ચાર પ્રેક્ષાસદન મંડપો

૧ જેમ આઈત જિન તીર્થકરોના આ લોકભોગ્ય પુણ્ય ફળરૂપ વરેલી સિદ્ધિઓ તરીકે અષ્ટપ્રાતિહાર્યો હોય છે તેમ મહા ચક્રવર્તીની પાસે ચૌદ રત્નો હોય છે. તેમાં વાર્ધકી-સ્થપતિ શિલ્પી એ તેમનું છદું રત્ન કદ્યું છે. મહાચક્રવર્તી કદ્યે તે કાર્ય તે ચૌદ રત્નથી, અસાધ્ય હોય તો પણ પળવારમાં સાધ્ય થાય છે તે તે મહાચક્રવર્તીની સાથે જ તે રત્નો હાજર હોય છે.

સેનાપતિગૃહપતિપુરોહિતગજતુરગ વાર્ધકી: સ્ત્રી ।
ચક્ર છત્રં ચર્મ મણિ: કાંકિની ખંડગંડઃ ચ ॥૩॥

મહાચક્રવર્તીનાં ચૌદ રત્નોમાં સેનાપતિ, ગૃહપતિ, પુરોહિત, હાથી, ઘોડો, શિલ્પી વાર્ધકી અને સ્ત્રી એ સાત રત્નો પંચેન્દ્રિય છે. ચક્ર, છત્ર, ઢાલ, મણિ, કાંકિની રત્ન, ખડગ અને દંડ એ સાત રત્નો એકેન્દ્રિય છે. આ ચૌદ રત્નો મહાચક્રવર્તીની સેવામાં સદા સર્વદા હાજર હોય છે. આ એકેક રત્નના હજાર-હજાર દેવો અધિકાર્યક હોય છે. (જૈન દર્શન)

(રસિક મંડપ જેવા કક્ષાસનવાળા) કરાવ્યા. તે પ્રેક્ષા મંડપોની મધ્યમાં સૂર્યબિંબને ઉપહાસ્ય કરનારા વજભય અક્ષવાટ રચ્યા અને દરેક અક્ષવાટની મધ્યમાં કમળમાં કણિકાની જેમ એકેક મનોહર સિંહાસન રચ્યું. પ્રેક્ષા મંડપની આગળ એકેક મણિપીઠિકા રચી. તેની પર રત્ના મનોહર ચૈત્યસ્તૂપ રચ્યા. તે દરેક ચૈત્યસ્તૂપમાં આકાશને પ્રકાશિત કરનારી દરેક દિશાએ મોટી મણિપીઠિકા રચી.

મणિપીઠિકોપરિસ્થા: પંચશતધનુમિતા: ।

શાસ્ત્રત પ્રતિમા: સ્થિતા ક્રષભ ચંદ્રાનનયો: ॥૩॥

વારિષેણ વર્ધમાન પર્યકાસનસ્થિતા: ।

સિંહનિષદ્યાપ્રાસાદે નંદીશ્વર દ્વીપસમ: ॥૪॥

તે મણિપીઠિકાની ઉપર ચૈત્યસ્તૂપની સન્મુખ પાંચસો ધનુષ્ય પ્રમાણવાળી રત્નનિર્મિત અંગવાળી ઋખભાનન, ચંદ્રાનન, વારિષેણ અને વર્ધમાન નામની ચારે પર્યકાસને બેઠેલી મનોહર નેત્રરૂપી પોયણાને ચંદ્રિકા સમાન નંદીશ્વર મહાદ્વિપના ચૈત્યની અંદર છે તેવી શાશ્વતજિન પ્રતિમાઓ રચાવી સ્થાપન કરી.

તે દરેક ચૈત્યસ્તૂપની આગળ અમૂલ્ય માણિક્યભય વિશાળ એવી સુંદર પીઠિકાઓ રચી. તેના પર એકેક હીંદ્રદ્વજ રચ્યો. જાણે દરેક દિશાએ ધર્મે પોતાના જયસ્તંભો આરોપ્યા હોય તેવા તે હીંદ્રદ્વજ જણાતા હતા.

દરેક હીંદ્રદ્વજ આગળ ત્રણ ત્રણ પગથિયાં અને તોરણવાળી નંધા નામે પુષ્કરિણી (વાવડીઓ) રચી. સ્વરચ્છ શીતલ જળથી ભરેલી અને વિચિત્ર કમળોથી શોભતી તે પુષ્કરિણીઓ દધિમુખ પર્વતના આકારભૂત પુષ્કરિણીઓ જેવી મનોહર લાગતી હતી.

તે સિંહનિષદ્યા નામના મહાચૈત્યના મધ્ય ભાગમાં મોટી મણિપીઠિકા બનાવી અને સમવસરણની જેમ તેના મધ્ય ભાગમાં વિચિત્ર રત્નમય એક દેવચંદ્ર રચ્યો (જ્યાં પ્રભુ ચડતાં વિશ્રામ લઈ દેશના હોય હતા).

તે ચૈત્યની ભીંસોમાં વિચિત્ર મણિમય ગવાશ (ઝરખા) રચ્યા હતા. તેના પ્રભાપટલથી જાણે તેમાંથી પડા ઉત્પન્ન થયેલા હોય તેવા જણાતા હતા....

દેવચંદ્રે પ્રતિષ્ઠિતા: પ્રતિમાસ્તત્ર નિર્મલા: ।

ક્રષભસ્વામિમુખ્યાનાં ચતુર્વિશતિરહતામ् ॥૫॥

પ્રતિમા: સ્વસ્વસંસ્થાના માનવર્ણધરાસ્તુ તા: ।

સાક્ષાદિવ સ્વામિનો ભાસ: શૈલેષીધ્યાનવર્તિન: ॥૬॥

આગળ કહેલા દેવચંદ્રની ઉપર શૈલેશી ધ્યાનમાં વર્તતી હોય તેવી દરેક પ્રભુના પોતપોતાના દેહના માન જેવી ને પોતપોતાના દેહના વર્ગ (રંગ)ને ધારણ કરનારી, જાણે દરેક પ્રભુ પોતે જ બિરાજમાન હોય તેવી ઋખ આદિ ચોવીસ અર્હતોની નિર્મલ રત્નમય પ્રતિમા રચીને સ્થાપન કરી.

તત્ર ષોડશ સૌવર્ણ લાજવર્તસમદ્વયે ।

દ્વૌ સ્ફટિકૌ દ્વે વૈઙ્ઘર્યે દ્વે ચ રક્તમળિમયે ।

તાસાં ચાર્હત્પ્રતિમાનાં સર્વસામપિજહવિરે ॥૭॥

તેમાં સોળ પ્રતિમા સોનાવાર્ણની, બે રાજવર્ણ (શ્વામ) રત્નની, બે સ્ફટિકની, બે (લીલા) વૈદૂર્યની અને બે રક્તવર્ણની (પૂર્વ ‘બે’, દક્ષિણે ચાર, પશ્ચિમે આઠ ને ઉત્તરે દશ) એમ ચોવીસ પ્રતિમાઓ બેસાડી દેવચંદ્ર ઉપર ઉજજવલ રત્નની ચોવીસ ઘંટાઓ શામરણ રચી.

अष्टापदस्य शिखरे मणिमाणिक्यभूषणम् ।
 नंदीश्वरस्य चैत्यानां प्रतिस्पर्द्धिनं पावनम् ॥८॥
 चैत्यं भरतचत्रिमात् आज्ञानुसारं कारितम् ।
 तेन वार्द्धकी रत्नेन यथाविधि प्रमाणतः ॥९॥

अष्टापद पर्वतनी ઉપर ભસ્તકના મુકુટ - મહિં જેવા તથા નંદીશ્વરાદિના ચૈત્યની સ્પર્ધા કરે તેવું પવિત્ર એવું તે ચૈત્ય ભરત મહારાજની આજ્ઞા થતાં તત્કાળ સર્વ કળાના શ્પતા એવા વાર્દ્ધકી રત્ને (સ્થપતિ શિલ્પીએ) વિધિ પ્રમાણે બનાવી આપ્યું.

चક્રિણ દંડરલેન શૃંગાણિ ચ છેદિતાનિ ।
 ઋજુસ્તંભવસ્થિતત્વાત् મનુજાનૈવારોહન્તિ ॥१०॥
 પર્વતમેખલા ઇવ સોપાનાન્યષ્ઠૌ ચ કૃતઃ ।
 યોજનમેકમુચ્ચાનિ તેનાષ્ટાપદઃ પ્રસિદ્ધઃ ॥११॥
 તતઃપ્રભૂતિ શૈલોડસૌ નામ્નાષ્ટાપદ ઇત્યભૂત ।

ભરત ચક્રવર્તીએ દંડરત્ન વડે તે પર્વતના દાંતા પાડી નાખ્યા. તેથી સરળ અને ઊંચા સ્તંભની પેઢે એ પર્વત લોકોને ન ચડી શકાય તેવો થઈ ગયો - પછી મહારાજા એ પર્વતની ફરતી મેખલાઓ જેવા અને મનુષ્યોથી ઉલ્લંઘન થઈ શકે નહિ એવા એકેક યોજનને અંતરે આઠ પગથિયાં બનાવ્યા ત્યારથી તે પર્વતનું નામ “અષ્ટાપદ” પડ્યું.

ઉપરોક્ત અષ્ટાપદ વિષયક વર્ણન ત્રિષણિશલાકાપુરુષ ચરિત્રના આધારે કરવામાં આવ્યું છે.

‘ત્રિષણિશલાકા પુરુષ પર્વ’ (૧) સર્ગ ૬ શ્લોક ૫૬૬ થી ૬૭૬

અધ્યાય ૨૬ - અષ્ટાપદ સ્વરૂપ (ચાલુ)

શ્રી વિશ્વકર્મા ઉવાચ

ચતુર્વિંશતિર્જિનચैત्यं શતાર્દ્ધ ચ દ્વયાધિકમ् ।
 દ્વયધિકસપ્તતિસ્તથા કાર્યા શતમણોત્તરમ् ॥૧॥

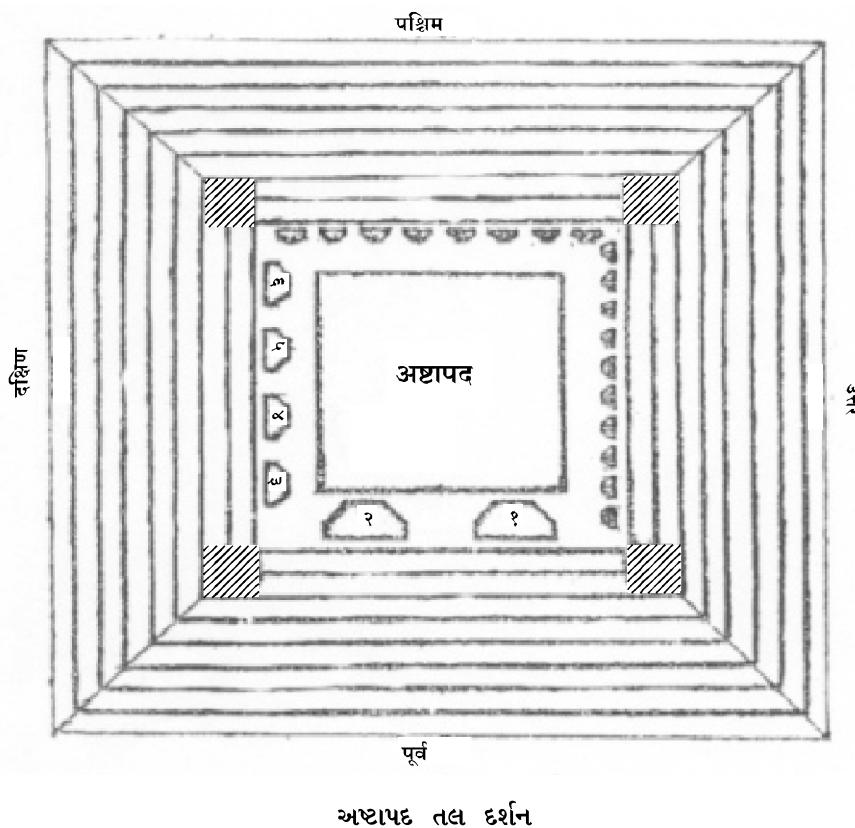
જગત્યાં ચ તથા પ્રોક્તાં મંડપં ચ તથૈવ ચ ।
 સમોસરણમણ્ટાપદં મયા પ્રોક્તં સુવિસ્તરૈ: ॥૨॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે: ચોવીસ જિનાયતન; બાવન જિનાયતન, બહુતેર જિનાયતન અને એકસો આઠ જિનાયતન અને તેની જગતી અને મંડપોનું પાણ મેં કહ્યું છે; હવે સમવસરણ અને અષ્ટાપદનાં સ્વરૂપો વિસ્તારથી કહું છું.

નારદોવાચ

વિશ્વકર્મા સ્વયં દેવો વિશ્વકર્મા જગત્પતિ: ।
 જિનાલયં કથંદેવ ! અષ્ટાપદસ્ય લક્ષણમ् ॥૩॥
 તન્મધ્યે દેવતાસ્થાન ચતુર્દિક્ષ જિનાસ્તથા ।
 તદ્ ભ્રમૈર્દેવતામાનં પદમાનં કથં પ્રભો ! ॥૪॥

નારદજી કહે છે હે વિશ્વકર્મા ! આપ સ્વયં વિશ્વના કર્તા જગત્પતિ દેવ છો. જિનાયતનો અને અષ્ટાપદનાં લક્ષણો મને કહો. તેની ચારે દિશામાં જિન દેવોનાં સ્થાન અને ફરતા દેવસ્થાનનાં પદના માન મને હે પ્રભો, કહો.



अष्टापद तथा दर्शन

श्री विश्वकर्मा उवाच

जगत्योर्ध्वं च शालाया गर्भे च देवतापदम् ।
 द्वारस्य द्वारमानेन स्तंभ कुंभोदुंबरम् ॥५॥
 प्रासादस्य समं ज्ञेयम् सपादं सार्वदेव च ।
 द्विगुणं वाथ कर्तव्यं मंडपसमसूत्रतः ॥६॥
 प्रासादा अष्टभद्रं च वामदक्षिणतोऽपि वा ।
 मंडपगर्भसूत्रेण कर्तव्यं शुभमीप्सितम् ॥७॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे. जगतीनी उपरनी (अष्टापदनी) शाला देवना गर्भगृहना पेढे करवी. थांभला कुंभीने उदुभ्भर ते सर्वद्वारना माने राखवा. ग्रासादना जेटलो सवायो ढोढो के बमणो मंडप करवो ते शुभ जाणुवुं. भूज मंटिरनी डाबी जमणी तरफ अष्टभद्रना ग्रासादो करवा. ते तेना गर्भसूत्रने अनुसरीने शुभ ईच्छित फળनी कामनावाणाए मंडपो करवा.

भूमिश्च भूमिमानेन चतुर्द्वारयुतं शुभम् ।
 अष्टभागैर्द्विरैर्वर्षां नखार्धं द्वादशोऽपि च ॥८॥
 प्रासादमाने प्रतिमा कर्तव्या शुभमीप्सितम् ।
 भद्रे भद्रे राजसेनो वेदी सुखासनं शुभम् ॥९॥

आ ग्रासादमां एक भूमि उपर बीજ ऐम मજलाओ मानथी करवा अने तेने ग्रासाद चारे तरफ द्वारवाणो करवो ते शुभ जाणुवुं. ते ग्रासाद आठ भाग, सोण भाग, दश भाग, बार भाग

१ द्वादशांशैज्ञिनैस्तथा - पाठान्तर

કે ચોવીસ ભાગોની વિભક્તિનો કરવો. પ્રાસાદના પ્રમાણથી પ્રતિમાળ કરતા તે શુભ જાણવું. પ્રાસાદના ભદ્રે ભદ્રે રાજસેનક વેદિકા આસનપદ્માદિ સુખાસન (કંકાસન) કરવા.

એકવક્ત્રો ત્રિવક્ત્રો વા ચતુર્વક્ત્રસ્તથૈવ ચ
એકવક્ત્રે ચ કર્તવ્ય મુખે ચૈવ ત્રિશાલિકા ॥૧૦॥

ચતુર્દિક્ષુ ચતુર્વક્ત્ર તસ્યાગ્રે મંડપ: શુભ: ।

આ અષ્ટાપદ પ્રાસાદ એક મુખનો - ત્રણ મુખનો, કે ચાર મુખનો કરવો. એક મુખના પ્રાસાદને આગળ ત્રિશાલિકા કરવી. ચાર મુખના પ્રાસાદને ચારે દિશામાં તેની આગળ મંડપો કરવા તે શુભ છે.

તર્દધ ચ ન કર્તવ્ય શાલાવેધ: પ્રજાયતે ॥૧૧॥

પટશાલાપ્રવેશેન દૃશ્યતે યસ્ય વાસ્તુષુ ।
સ્વામિસુખમાચાર્યશ્ર પૂજા ન લભ્યતે નરૈ: ॥૧૨॥

તસ્માત્સર્વ પ્રયત્નેન કર્તવ્ય ચ પૂજાગમ: ।

તત્કૃતં ચ શુભં જ્ઞેયં સર્વકામફલપ્રદમ् ॥૧૩॥

પુત્ર પોત્ર પ્રવર્ધન્તે પ્રજારાજજયાવહમ् ।

..... ॥૧૪॥

..... ।

રાજસેન તથા વેદી આસન મતવારણમ् ॥૧૫॥

ઇલિકાતોરણૌર્યુક્ત: શાલા પૂરિત: શુભ: ।

તન્મધ્યે ચ મહામેરુશતુર્દિક્ષુ જિનેશ્વરમ् ॥૧૬॥

પ્રથમાર્ચા પ્રમાણેન દ્વિચતુરષ્ટદિઙ્મિતા: ।

દૃષ્ટિસ્તુ દૃષ્ટિમાનેન સ્તનાન્ત વા શુભં ભવેત् ॥૧૭॥

અનુવાદ ૧૧ સે ૧૪ ૧/૨

અષ્ટાપદના ચાતુર્મુખ (મંડપ)ને રાજસેનક વેદિકા આસનપદ્મ કંકાસન કરવા. શાલા-આગલી ચોકીને ઇલિકાતોરણાયુક્ત સુશોભિત કરવું. તેવા પ્રાસાદની મધ્યમાં મહામેરુ જેવી વેદીપર ચારે દિશાઓ જિનેશ્વર પદ્મરાવવા. પહેલા આગલા બિભન્ના પ્રમાણના પૂર્વાદિ દિશામાં કુમે બે, ચાર, આઈ અને દશ એમ ચોવીસ જિનબિંબ સ્થાપન કરવાં. તે સર્વની દષ્ટિ સમસૂત્રમાં એક રાખવી અગાર સર્વ પ્રતિમાના સ્તનસૂત્ર એકસૂત્રમાં રાખવા.

તેન માનેન કર્તવ્યમધ: સ્થાનેન નંદતિ ?

આમ સમસૂત્રના માનથી રાખતાં નીચેની ગાઢી ચડાવવી.

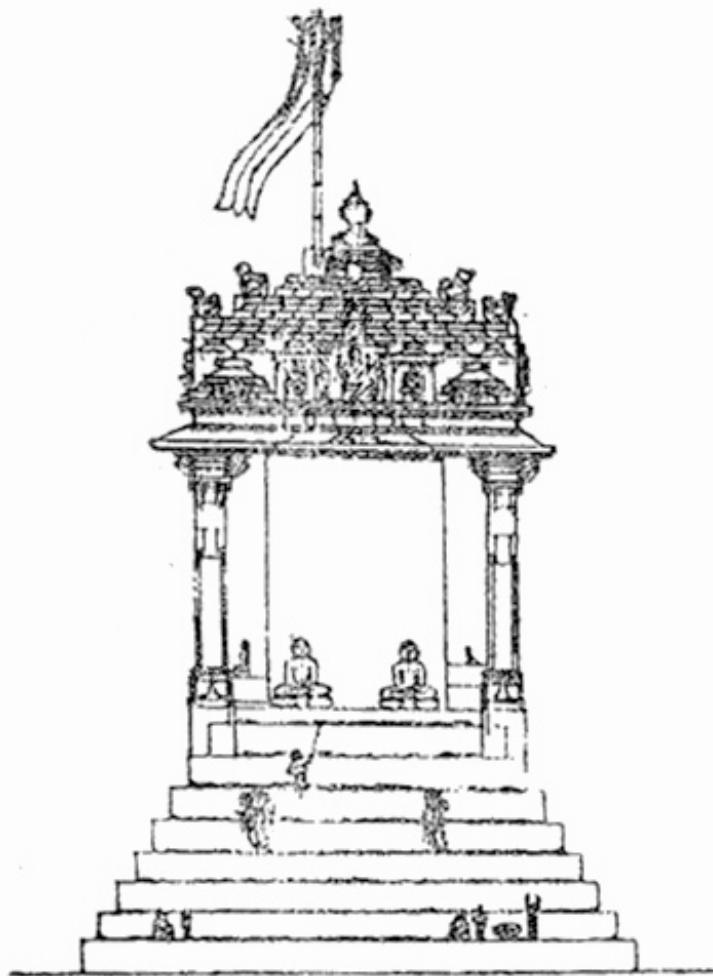
પદં ચ પદમાનેન પદં પદાનુસારત: ? ॥૧૮॥

એકભૂમિદ્વિભૂમિર્વા ત્રિભૂમિર્વા કૃતં શુભમ् ।

આદિપદાનુમાનેન કર્તવ્ય ભૂમિમુદ્યમ् ॥૧૯॥

તદૂર્ધ્વે શૃંગમુત્સેધં જટાયાં તત્પ્રકલ્પયેત् ।

તદૂર્ધ્વે ઊર્ખશૃંગાણિ અંડકૈ: કલશૈર્યુતમ् ॥૨૦॥ ઇતિ અષ્ટાપદ ॥



અષ્ટાપદ દર્શન

પદના માને પદો રાખવા, પદના અનુસારે પદો રાખવા. પદના માનથી એક ભૂમિ કે બે ભૂમિ કે ત્રણ ભૂમિનો પ્રાસાદ કરવો તે શુભ છે. મુખ્ય આદિ પદના માને ઉપરનો ભૂમિનો ઉદ્ય રાખવો. તેના ઉપર શૃંગો ચડાવી જટાની કલ્પના જેવું શિખર કરવું. તેના ઉરુશૃંગો અંડકો - કળશ યુક્ત પ્રાસાદ કરવો.

॥ ઇતિ અષ્ટાપદ ॥

ઇતિશ્રી વિશ્વકર્માકૃતે જ્ઞાનપ્રકાશદીપાર્ણવ વાસ્તુવિદ્યાયાં અષ્ટાપદ
લક્ષණાધિકારે ષડ્વિંશતિતમોઽધ્યાય: ॥૨૬॥

ઈતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત જ્ઞાનપ્રકાશ દીપાર્ણવના વાસ્તુવિદ્યાના અષ્ટાપદ લક્ષણાધિકાર પર શિલ્પવિશારદ પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી શિલ્પપ્રભા નામની ભાષાટીકાનો છવીસમો અધ્યાય (૨૬).



॥ શ્રી ત્રિષષ્ઠિ શલાકા પુરુષ ચરિત્ર ॥

ત્રિષષ્ઠિ અને અષ્ટાપદ

પ્રસ્તાવના :

કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રી હેમયંદ્રાચાર્ય રચિત “શ્રી ત્રિષષ્ઠિ શલાકા પુરુષ ચરિત્ર”ના પહેલા પર્વમાંથી શ્રી ત્રિષષ્ઠિ અને અષ્ટાપદ પર નિર્વાણ તથા અષ્ટાપદ સાથે સંકળાયેલ વિવિધ ઘટનાઓનું સંકલન કરવામાં આવ્યું છે.

વિશ્વોપકારી ભગવાન શ્રી ત્રિષષ્ઠિ ગ્રામ, ખાણા, નગર, દ્રોષમુખ, કર્બટ, પત્તન, મંડબ, આશ્રમ અને ખેડાઓથી પરિપૂર્ણ પૃથ્વીમાં વિચરતા હતા^૧. વિદ્ધાર સમયમાં પોતાની ચારે દિશાએ સવાસો યોજન સુધી લોકોની વ્યાધિનું નિવારણ કરવાથી વર્ષાત્કર્તૃના મેધની જેમ જગતજંતુઓને શાંતિ પમાડતા હતા; રાજા જેમ અનીતિના નિવારણાથી પ્રજાને સુખ આપે તેમ મુખક, શુક વગેરે ઉપદ્રવ કરનારા જીવોની અપવૃત્તિથી સર્વનું રક્ષણ કરતા હતા, અંધકારના ક્ષયથી સૂર્યની જેમ માણીઓનાં નૈમિત્તિક અને શાશ્વત વૈર શાંત કરવાથી સર્વને પ્રસન્ન કરતા હતા, પ્રથમ સર્વ રીતે સ્વસ્થ કરનારી વ્યવહાર પ્રવૃત્તિથી જેમ લોકસમૂહને આનંદ પમાડ્યો હતો, તેમ હાલ વિદ્ધારની પ્રવૃત્તિથી સર્વને આનંદ પમાડતા હતા, ઔદ્ઘધથી અજીર્ણ અને અતિ ક્ષુધાની જેમ અતિવૃષ્ટિ અને અનાવૃષ્ટિના ઉપદ્રવનો નાશ કરતા હતા, અંતઃશલ્યની જેમ સ્વચ્છ અને પરચકનો ભય દૂર થવાથી તત્કાળ પ્રસન્ન થયેલા લોકો તેમનો આગમન ઉત્સવ કરતા હતા, અને માંત્રિક પુરુષ જેમ ભૂત રાક્ષસથી રક્ષા કરે, તેમ સંહારકારક ઘોર દુર્ભિક્ષથી સર્વની રક્ષા કરતા હતા. આવા ઉપકારથી એ મહાત્માની સર્વ લોકો સ્તુતિ કરતા હતા. જાણો અંદર ન સમાવાથી બહાર આવેલી અનંત જ્યોતિ હોય તેવું અને સૂર્યમંડળને જીતનારું ભામંડળ તેઓએ ધારણ કર્યું હતું.^૨ આગળ ચાલતા ચક્કથી જેમ ચક્કવર્તી શોભે તેમ આકાશમાં આગળ ચાલતા અસાધારણ તેજવાળા ધર્મચક્કથી તેઓ શોભતા હતા; સર્વ કર્મનો જય કરવાથી ઊંચા જયસ્તંભ જેવો નાની નાની હજારો ધવજાઓ યુક્ત એક ધર્મધવજ તેઓની આગળ ચાલતો હતો; જાણો તેમનું પ્રયાણોચિત કલ્યાણ મંગળ કરતો હોય તેવો પોતાની મેળે જ નિર્ભર શાબ્દ કરતો દિવ્યદુંહુભિ તેમની આગળ વાગતો હતો; જાણો પોતાનો ચશ હોય તેવા આકાશમાં રહેલા પાદપીઠ સહિત સ્ફટિક રત્ના સિંહાસનથી તેઓ શોભતા હતા; દેવતાઓએ સંચાર કરેલા સુર્વાર્ણ કમલ ઉપર રાજહંસની જેમ લીલાસહિત તેઓ ચરણન્યાસ કરતા હતા; જાણો તેમના ભયથી રસાતલમાં પેસી જવાને દુર્ઘટતા હોય તેમ નીચા મુખવાળા થયેલા તીક્ષ્ણ દંડ રૂપ કંટકથી તેમનો

૧ અહિંથી તીર્થકરના અતિશય સંબંધીનું વર્ણન છે.

૨ તીર્થકર વગેરે તેની ચોતરફ સવાસો યોજન સુધી ઉપદ્રવકારથી રોગની શાંતિ થાય, પરસ્પરના વેરનો નાશ થાય. ધાન્યાદિને ઉપદ્રવકારી જંતુઓ ન થાય. મરકી વિ. ન થાય. અતિવૃષ્ટિ ન થાય. દુર્ભિક્ષ, દુષ્કાળ ન પડે. સ્વચ્છ પરચકનો ક્ષય ન થાય. એ તથા પ્રભુના મસ્તકની પાછળ ભામંડળ રહે એ કેવળજ્ઞાનના ગ્રાટ થવાથી થતા અગ્નિયાર અતિશય મહાન અતિશય છે.

પરિવાર આશ્રિત થતો નહોતો; જાણે કામદેવને સહાય કરવાના પાપનું પ્રાયશ્ચિત કરવાને ઈચ્છતી હોય તેમ જ ઋતુઓ સમકાળે તેમની ઉપાસના કરતી હતી; ચોતરફ દૂરથી નીચા નમતા માર્ગનાં વૃક્ષો, જોકે તેઓ સંશ્ચા રહિત છે, તો પણ જાણે તેમને નમસ્કાર કરતા હોય તેવા જણાતા હતા. પંખાના વાયરાની જેમ મૂદુ, શીતળ અને અનુકૂળ પવન તેમની નિરંતર સેવા કરતો હતો; સ્વાપીથી પ્રતિકૂળ (વામ) વરતનારાનું શુભ થાય નહીં એમ જાણતા હોય તેમ પક્ષીઓ નીચે ઊતરી તેમની પ્રદક્ષિણા કરી જમણી બાજુએ અતિકમણ કરતાં હતાં; ચપળ તરંગોથી જેમ સાગર શોભે તેમ જધન્યે કોટી સંખ્યાવાળા અને વારંવાર ગમનાગમન કરતા સુરઅસુરોથી તેઓ શોભતા હતા; ભક્તિવશ થઈ દિવસે પણ પ્રભાસહિત ચંદ્ર રહ્યો હોય તેવા આકાશમાં રહેલા છત્રથી તેઓ શોભતા હતા; અને જાણે ચંદ્રના જુદા કરેલા સર્વસ્વ કિરણોના કોશ હોય તેવા ગંગાના તરંગ જેવા શેત ચામરો તેમની ઉપર ઢોળાતા હતા;³ નક્ષત્ર ગણોથી ચંદ્રમાની જેમ તપથી પ્રદીપ થયેલા અને સૌખ્ય એવા લાખો ઉત્તમ શ્રમણોથી તેઓ વીટાયેલા હતા. જેમ સૂર્ય દરેક સાગરમાં અને દરેક સરોવરમાં કમલને પ્રબોધ (પ્રફુલ્લિત) કરે, તેમ એ મહાત્મા દરેક ગામ અને દરેક શહેરમાં ભવ્યજનોને પ્રતિબોધ કરતા હતા. આવી રીતે વિચરતા ભગવાનું ઋષભદેવજી એકદા અષ્ટાપદ પર્વતે આવ્યા.

અત્યંત શેતપણાને લીધે જાણે શરદઋતુના વાદળાનો એક ઠેકાણે કલ્પેલો ઠગલો હોય, દરી ગયેલા કીર સમુદ્રનો લાવી મૂકેલ વેલાફૂટ હોય અથવા પ્રભુના જન્માભિષેક વખતે ઈન્દ્રે વૈક્ષિય કરેલા ચાર વૃષભના રૂપ માંણેનો ઊંચાં શૃંગવાળો એક વૃષભ હોય એવો તે ગિરિ જણાતો હતો. નંદીશરદીપ માંણેની પુષ્કરિણી (વાવડી)માં રહેલા દધિમુખ પર્વતોમાંથી આવેલો જાણે એક પર્વત હોય, જંબૂદીપદ્મપી કમલનો જાણે એક બિસખંડ (નાળ) હોય અને પૃથ્વીનો જાણે શેત રવમય ઊંચો મુગટ હોય તેવો તે પર્વત શોભતો હતો. નિર્મળ તથા પ્રકાશવાળો હોવાથી દેવગણો તેને હુંમેશાં જળથી સ્નાન કરાવતા હોય અને વખોથી જાણે લુંછતા હોય તેવો તે જણાતો હતો. વાયુએ ઉડાયેલા કમલના રેણુઓ વડે તેના નિર્મળ સ્ફટિક મણિના તટને સ્વીઓ નદીના જળ જેવો દેખતી હતી. તેનાં શિખરોના અગ્રભાગમાં વિશ્રામ લેવાને બેઠેલી વિદ્યાધરોની સ્વીઓને તે વૈતાઢ્ય અને ક્ષુદ્ર દિમાલયનું સ્મરણ કરાવતો હતો. સ્વર્ગ ભૂમિનું જાણે અંતરીક્ષ દર્પણ હોય, દિશાઓનું જાણે અતુલ્ય હાસ્ય હોય અને ગ્રહ-નક્ષત્રોને નિર્મણ કરવાની મૃત્તિકાનું અક્ષય સ્થળ હોય એવો તે જણાતો હતો. તેનાં શિખરોના મધ્ય ભાગમાં કીડાથી શ્રાંત થયેલાં મૃગો બેઠેલાં હતાં, તેથી તે અનેક મૃગલાંઘન (ચંદ્ર)ના વિભ્રમને બતાવતો હતો. નિર્જરણાની પંક્તિઓથી જાણે નિર્મળ અર્ધવખને છોડી દેતો હોય અને સૂર્યકાંત મણિઓના પ્રસરતા કિરણોથી જાણે ઊંચી પતાકાવાળો હોય તેવો તે શોભતો હતો. તેના ઊંચાં શિખરના અગ્રભાગમાં સૂર્ય સંકમ થતો, તેથી તે સિદ્ધ લોકોની મુંઘ સ્વીઓને ઉદ્યાચલનો ભ્રમ આપતો હતો. જાણે મધૂરપત્રથી રચેલાં મોટાં છત્રો હોય તેવાં અતિ આર્દ્રપત્રવાળાં વૃક્ષોથી તેમાં નિરંતર છાયા થઈ રહી હતી. ખેચરોની સ્વીઓ કૌતુકથી મૃગના બચ્ચાઓનું લાલનપાલન કરતી, તેથી હરણીઓના ઝરતા દૂધ વડે તેનું સર્વ લતાવન સિંચાતું હતું. કદલી પત્રના અર્ધા વખ્યાળી શબ્દરીઓના નૃત્યને જોવાને માટે ત્યાં નગરની સ્વીઓ નેત્રોની શ્રેણી કરીને રહેતી હતી. રતિથી શ્રાંત થયેલી સર્પિણીઓ ત્યાં વનનો મંદ મંદ પવન પીતી હતી; તેના લતાવનને પવનદ્રૂપી નટે કીડાથી નચાવ્યું હતું, કિન્નરોથી સ્વીઓ રતિના આરંભથી તેની ગુફાઓને મંદિરરૂપ કરતી હતી, અને અપસરાઓના સ્નાન કરવાના ધસારાથી તેના સરોવરનું જળ તરંગિત થયેલું હતું. કોઈ ઠેકાણે સોગઠાબાજુ રમતા, કોઈ ઠેકાણે પાનગોષ્ઠી કરતા અને કોઈ ઠેકાણે પણિત (પણ) બાંધતા યક્ષોથી તેના મધ્ય ભાગમાં કોલાહલ થઈ રહ્યો હતો. તે પર્વત ઉપર કોઈ ઠેકાણે કિન્નરોની સ્વીઓ, કોઈ ઠેકાણે ભિલ લોકોની સ્વીઓ અને કોઈ ઠેકાણે વિદ્યાધરની સ્વીઓ, કીડાનાં ગીત ગાતી હતી.

³ અહીં સુધીના સર્વે અતિશય દેવકૃત છે.

કોઈ ઠેકાણે પાકેલાં દ્રાક્ષફળ ખાઈને ઉન્મત થયેલાં શુક પક્ષીઓ શબ્દ કરતાં હતાં, કોઈ ઠેકાણે આપ્રના અંકુર ખાવાથી ઉન્મત થયેલી કોકિલાઓ પંચમ સ્વર કરતી હતી, કોઈ ઠેકાણે કમલતંતુના આસ્વાદથી ઉન્મત થયેલા હંસો મધુર શબ્દ કરતા હતા, કોઈ ઠેકાણે સરિતાના તટમાં મદવાળાં થયેલાં કૌંચ પક્ષીઓના કેકાર શબ્દો થતા હતા, કોઈ ઠેકાણે નજીક રહેલા મેઘથી ઉન્મદ પામેલા મધ્યરોનો કેકા શબ્દ થતો હતો અને કોઈ ઠેકાણે સરોવરમાં ફરતાં સારસ પક્ષીઓના શબ્દો સંભળાતા હતા; એથી તે ગિરિ મનોહર લાગતો હતો. કોઈ ઠેકાણે રાતાં અશોકવૃક્ષોનાં પત્રોથી જાણે કસુંબી વસ્ત્રવાળો હોય, કોઈ ઠેકાણે તમાલ, તાલ અને હિતાલનાં વૃક્ષોથી જાણે શ્યામ વસ્ત્રવાળો હોય, કોઈ ઠેકાણે સુંદર પુષ્પવાળા ખાખરાના વૃક્ષોથી જાણે પીળા વસ્ત્રવાળો હોય અને કોઈ ઠેકાણે માલતી અને મલિલકાના સમૂહથી જાણે શૈત વસ્ત્રવાળો હોય એવો તે પર્વત જણાતો હતો. આઠ યોજન ઊંચો હોવાથી તે આકાશ જેટલો ઊંચો લાગતો હતો. એવા તે અષ્ટાપદ પર્વત ઉપર ગિરિના જેવા ગરિષ્ઠ જગત્ગુરુ આરૂઢ થયા. પવનથી ખરતાં પુષ્પોથી અને નિર્જરણાના જળથી એ પર્વત જગત્પતિ પ્રભુને અન્નપાન આપતો હોય તેવો જણાતો હતો. પ્રભુનાં ચરણથી પવિત્ર થયેલો એ પર્વત, પ્રભુના જન્મ સ્નાતથી પવિત્ર થયેલા મેરુથી પોતાને ન્યૂન માનતો નહોતો. દર્શ પામેલા કોકિલાદિકના શબ્દના મિષ્ઠી જાણે તે પર્વત જગત્પતિના ગુણ ગાતો હોય એવો જણાતો હતો.

તે પર્વત ઉપર વાયુકુમાર દેવોએ એક યોજન પ્રદેશમાંથી માર્જન કરનારા સેવકોની જેમ ક્ષણ વારમાં તૃણ - કાષ્ઠાદિક દૂર કર્યું અને મેઘકુમારોએ પાણીને રહેનારા પાડાની જેવાં વાદળાં વિકુરીને સુગંધી જળથી તે ભૂમિ ઉપર સિંચન કર્યું. પછી ત્યાં દેવતાઓએ વિશાળ એવી સુવાર્ણરત્નની શિલાઓથી દર્પણના તળની જેવું સપાટ પૂથીતળ બાંધી લીધું. તેની ઉપર વ્યંતર દેવતાઓએ ઈન્દ્રધનુષનાં ખંડની જેવાં પંચવર્ણી પુષ્પોની જાનુમ્રમાણ વૃષ્ટિ કરી અને જમના નદીના તરંગની શોભાને ગ્રહણ કરનારાં વૃક્ષોના આર્દ્ર પાત્રોનાં ચારે દિશાએ તોરણો બાંધ્યાં. ચારે બાજુ સ્તંભોની ઉપર બાંધેલાં મકરાકૃતિ તોરણો સિંધુના બંને તટમાં રહેલા મગરની શોભાને અનુસરતા શોભતા હતાં. તેના મધ્યમાં જાણે ચાર દિશાઓની દેવીના રૂપાનાં દર્પણો હોય તેવાં ચાર છત્રો તથા આકાશગંગાના ચપળ તરંગોની ભાંતિને આપનારા પવને તરંગિત કરેલા ધ્વજપટો શોભતાં હતાં. તે તોરણોની નીચે રચેલાં મોતીના સ્વસ્તિકો ‘સર્વ જગતનું આ મંગળ છે.’ એવી ચિત્રલિપિનાં વિભ્રમને કરાવતા હતા. બાંધેલા ભૂમિતળ ઉપર વૈમાનિક દેવતાઓએ રત્નાકરની શોભાના સર્વસ્વ જેવાં રત્નમય ગઢ કર્યો અને તે ગઢ ઉપર માનુષોત્તર પર્વતની સીમા ઉપર રહેલી ચંદ્ર સૂર્યના કિરણોની માળા જેવી માણેકના કાંગરાની પંક્તિઓ રચી. પછી જ્યોતિષ દેવતાઓએ વલયાકારે કરેલું ડેમાદ્રિ પર્વતનું શિખર હોય તેવો નિર્મળ સુવાર્ણનો મધ્યમ ગઢ કર્યો અને તેના ઉપર રત્નમય કાંગરા કર્યા; તેમાં પ્રેક્ષકોનાં પ્રતિબિંબો પડવાથી જાણે ચિત્રવાળા હોય તેવા તે કાંગરાઓ જણાતા હતા. તે પછી ભવનપતિઓએ, કુંડલાકારે થયેલા શેષનાગના શરીરના ભ્રમને આપનારો છેલ્લો રૂપાનો ગઢ કર્યો અને તેની ઉપર ક્ષીરસાગરના તટના જળ ઉપર રહેલી ગરૂડની શ્રેણી હોય તેવી સુવાર્ણના કાંગરાની શ્રેણી કરી. પછી જેમ અયોધ્યા નગરીના ગઢમાં કર્યા હતા તેમ યક્ષોએ તે દરેક ગઢમાં ચાર ચાર દરવાજા કર્યા અને તે દરવાજાને માણેકનાં તોરણો કર્યા; પોતાનાં પ્રસરતાં કિરણોથી જાણે તે તોરણો શતગુણા હોય તેવા જણાતા હતા. દરેક દ્વારે વ્યંતરોએ નેત્રની રેખામાં રહેલી કાજળની રેખાની પેઠે આચરણ કરતા ધૂમાડા રૂપી ઉર્મિઓને ધારણ કરનારા ધૂપિયાઓ રાખ્યાં હતાં. મધ્યગઢની અંદર ઈશાન દિશામાં, ધરમાં દેવાલયની જેવો પ્રભુને વિશ્રામ લેવા માટે એક દેવછંદ રચ્યો. વહાણની મધ્યમાં જેમ કૂવાસથંભ હોય તેવું વ્યંતરોએ તે સમવસરણના મધ્યમાં ત્રણ કોસ ઊંચું ચૈત્યવૃક્ષ રચ્યું. તે ચૈત્યવૃક્ષની નીચે પોતાનાં કિરણોથી જાણે વૃક્ષને મૂળથી જ પદ્ધતિવિત કરતી હોય તેવી એક રત્નમય પીઠ રચી અને તે પીઠ ઉપર ચૈત્યવૃક્ષની શાખાઓના અંત પદ્ધતિવિતો વારંવાર સાફ થતો એક રત્નછંદ રચ્યો, તેની મધ્યમાં પૂર્વ તરફ વિકસિત કમલકોશની મધ્યમાં કર્ણિકાની જેવું, પાદપીઠ સહિત એક રત્નસિંહાસન

રચ્યું અને તેની ઉપર જાણે ગંગાના આવૃત્તિ કરેલા ત્રણ પ્રવાહ હોય તેવા ત્રણ છતો બનાવ્યાં. એવી રીતે જાણે અગાઉથી જ તૈયાર હોય અને તે કોઈ ડેકાણેથી લાવીને અહીં મૂકી દીધું હોય તેમ ક્ષણ વારમાં દેવ અને અસુરોએ મળીને ત્યાં સમવસરણ રચ્યું.

જગત્પતિએ ભવ્યજનોના હદ્યની જેમ મોક્ષદ્વાર રૂપ એ સમવસરણમાં પૂર્વદ્વારથી પ્રવેશ કર્યો. તત્કાળ જેની શાખાના ગ્રાંત પદ્ધતિવો પોતાના કર્ણના આભૂષણ રૂપ થતા હતા એવા અશોકવૃક્ષને તેમણે પ્રદક્ષિણા કરી. પછી પૂર્વદિશા તરફ આવી ‘નમસ્તીથાય’ એમ બોલી રાજહંસ જેમ કમલ ઉપર બેસે તેમ તેઓ સિંહાસન ઉપર બિરાજમાન થયા. તરત જ બાકીની ત્રણ દિશાના સિંહાસન ઉપર વ્યંતર દેવોએ ભગવંતના ત્રણ રૂપ વિકૃત્યા. પછી સાધુ, સાધ્વી અને વૈમાનિક દેવતાની સ્ત્રીઓએ પૂર્વ દ્વારથી પેસી, પ્રદક્ષિણા કરી, ભક્તિપૂર્વક જિનેશ્વર અને તીર્થને નમસ્કાર કર્યો અને પ્રથમ ગઢમાં પ્રથમ ધર્મરૂપી ઉદ્ઘાનના વૃક્ષરૂપ સાધુઓ પૂર્વ અને દક્ષિણ દિશાના મધ્યમાં બેઠા, તેમના પૃષ્ઠ ભાગમાં વૈમાનિક દેવતાઓની સ્ત્રીઓ ઊભી રહી અને તેની પાછળ તેવી જ રીતે સાધ્વીઓનો સમૂહ ઊભો રહ્યો. ભુવનપતિ, જ્યોતિષી અને વ્યંતરોની સ્ત્રીઓ દક્ષિણદ્વારથી પ્રવેશ કરી પૂર્વ વિધિવત્ પ્રદક્ષિણા નમસ્કાર કરીને નૈऋત્ય દિશામાં બેઠી અને તે ત્રણો નિકાયના દેવો પદ્ધતિમાં દ્વારથી પ્રવેશ કરી તેવી જ રીતે નમી અનુક્રમે વાયવ્ય દિશામાં બેઠા. આવી રીતે પ્રભુને સમોસર્યા જાણી, પોતાનાં વિમાનોના સમૂહથી ગગનને આરદ્ધાદિત કરતો ઈન્દ્ર ત્યાં સત્ત્વર આવ્યો. ઉત્તરદ્વારથી સમવસરણમાં પ્રવેશ કરી, સ્વામીને ત્રણ પ્રદક્ષિણા દઈ નમસ્કાર કરી ભક્તિવાન્ન ઈન્દ્ર આ પ્રમાણે સ્તુતિ કરવા લાગ્યો.

“હે ભગવાન્ ! જોકે ઉત્તમ યોગીઓથી પણ આપના ગુણો સર્વ પ્રકારે જાણવા અશક્ય છે, તો સ્તુતિ કરવાને યોગ્ય એવા તે આપના ગુણો ક્યાં અને નિત્ય પ્રમાણી એવો હું સ્તોત્રા ક્યાં ? તથાપિ હે નાથ ! હું યથાશક્તિ તમારા ગુણોને સ્તવીશ. હે નાથ ! પ્રમાદરૂપ નિક્રમાં મગ્ર થયેલા મારા જેવા પુરુષોના કાર્યને માટે આપ સૂર્યની જેમ વારંવાર ગમનાગમન કરો છો. જેમ કાળે કરી પદ્ધતર જેવું થયેલું (દરી ગયેલું) ઘૃત અગ્નિથી ઓગળે છે, તેમ લાખો જન્મ વડે કરી ઉપાર્જન કરેલાં કર્મ તમારા દર્શનથી નાશ પામે છે. હે પ્રભુ ! એકાંત સુષ્ઠમ કાળ (બીજા આરા)થી સુષ્ઠમ દુઃખમ કાળ (ત્રીજો આરા) સારો છે કે જે સમયમાં કટ્યવૃક્ષથી પણ વિશેષ ફળને આપનારા તમે ઉત્પન્ન થયા છો. હે સર્વ ભુવનના પતિ ! જેમ રાજ ગામડા અને ભુવનોથી પોતાની નગરીને ઉત્કૃષ્ટ કરે છે, તેમ તમે આ ભુવનને ભૂષિત કરેલું છે. જે હિત પિતા, માતા, ગુરુ અને સ્વામી એ સર્વે કરી શકતાં નથી, તે હિત તમે એક છતાં પણ અનેકની જેવા થઈને કરો છો. ચંદ્રથી જેમ રાત્રી શોભે, હુંસથી જેમ સરોવર શોભે અને તિલકથી જેમ મુખ શોભે તેમ તમારથી આ ભુવન શોભે છે.” આવી રીતે યથાવિધિ ભગવાનની સ્તુતિ કરીને વિનયી ભરતરાજ પોતાને યોગ્ય સ્થાને બેઠા.

પછી ભગવાને યોજન સુધી પ્રસરતી અને સર્વ ભાખામાં સમજાય તેવી ભારતીથી વિશ્વના ઉપકારને માટે દેશના આપી. દેશના વિરામ પાખ્યા પછી ભરતરાજાએ પ્રભુને નમી રોમાંચિત શરીરવાળા થઈ અંજલિ જોડી આ પ્રમાણે વિજાપુનિ કરી, ‘હે નાથ ! આ ભરતખંડમાં જેમ આપ વિશ્વના હિતકારી છો તેમ બીજા કેટલા ધર્મચક્રીઓ થશે ? અને કેટલા ચક્રવર્તીઓ થશે ? હે પ્રભુ ! તેમનાં નગર, ગોત્ર, માતા-પિતાનાં નામ, આયુષ, વર્ણ, શરીરનું માન, પરસ્પર અંતર, દીક્ષાપર્યાય અને ગતિ-એ સર્વ આપ કહો.’

ભગવાને કહ્યું- ‘હે ચક્રી ! આ ભરતખંડમાં મારી પછી બીજા ત્રેવીસ અર્હતો થશે અને તારા સિવાય બીજા અગિયાર ચક્રવર્તી થશે. તેમાં વીસમા અને બાવીસમા તીર્થકરો ગૌતમગોત્રી થશે અને બીજા કાશ્યપગોત્રી થશે તથા તે સર્વ મોક્ષગામી થશે. અયોધ્યામાં જિત્શાનુ રાજ અને વિજયારાણીના

પુત્ર બીજા અજિત નામે તીર્થકર થશે, તેમનું બોતેર લક્ષ પૂર્વનું આયુષ્ય, સુવર્ણના જેવી કાંતિ, અને સાડાચારસેં ધનુષની કાયા થશે અને તેઓ પૂર્વાંગે^१ ઉણા લક્ષ પૂર્વના દીક્ષા પર્યાયવાળા થશે. મારા અને અજિતનાથના નિર્વાણકાળમાં પચાસલાખ કોટિ સાગરોપમનું અંતર છે. શ્રાવસ્તી નગરીમાં જિતારીરાજા અને સેનારાણીના પુત્ર ગ્રીજા સંભવ નામે તીર્થકર થશે, તેમનો સુવર્ણના જેવો વર્ણ, સાઈ લાખ પૂર્વનું આયુષ્ય અને ચારસેં ધનુષ ઊંચું શરીર થશે, તેઓ ચાર પૂર્વાંગે હીન લાખ પૂર્વનો દીક્ષાપર્યાય પાળશે અને અજિતનાથ તથા તેમના નિર્વાણ વચ્ચે ત્રીસ લાખ કરોડ સાગરોપમનું અંતર થશે. વિનીતાપુરીમાં સંવરરાજા અને સિદ્ધાર્થ રાણીના પુત્ર ચોથા અભિનંદન નામે તીર્થકર થશે, તેમનું પચાસ લાખ પૂર્વનું આયુષ્ય, સાડાત્રણસેં ધનુષની કાયા અને સુવર્ણ જેવો વર્ણ થશે; તેમનો દીક્ષાપર્યાય આઈ પૂર્વાંગે ન્યૂન લાખ પૂર્વનો થશે અને દશ લાખ કરોડ સાગરોપમનું અંતર થશે. તે જ નગરીમાં મેઘરાજા અને મંગલા રાણીના પુત્ર સુમતિ નામે પાંચમા તીર્થકર થશે; તેમનો સુવર્ણ જેવો વર્ણ, ચાળીસ લક્ષ પૂર્વ આયુષ્ય અને ત્રણસેં ધનુષની કાયા થશે; વ્રત પર્યાય દ્વાદશ પૂર્વાંગે ઉણ લાખ પૂર્વનો થશે અને અંતર નવ લાખ કોટિ સાગરોપમનું થશે. કૌશાંબી નગરીમાં ધરરાજા અને સુસીમા દેવીના પુત્ર પદ્મપ્રભ નામે છઢા તીર્થકર થશે; તેમનો રક્તવર્ણ, ત્રીસ લક્ષ પૂર્વ આયુષ્ય અને અઢીસેં ધનુષની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય સોળ પૂર્વાંગે ન્યૂન લાખ પૂર્વનો અને અંતર નેવું હજાર કોટિ સાગરોપમનું થશે. વારાણસી નગરીમાં પ્રતિષ્ઠ રાજા અને પૃથ્વી રાણીના પુત્ર સુપાશ્વર નામે સાતમા તીર્થકર થશે; તેમની સુવર્ણ જેવી કાંતિ, વીસ લક્ષ પૂર્વ આયુષ્ય અને બસો ધનુષયની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય વીસ પૂર્વાંગે ન્યૂન લાખ પૂર્વનો અને નવ હજાર કોટિ સાગરોપમનું અંતર થશે. ચંદ્રાનન નગરમાં મહિસેન રાજા અને લક્ષમણા દેવીના પુત્ર ચંદ્રપ્રભ નામે આઈમા તીર્થકર થશે, તેમનો શૈતવર્ણ, દશ લક્ષ પૂર્વ આયુષ્ય અને દોઢસો ધનુષની કાયા થશે તથા વ્રતપર્યાય ચોવીસ પૂર્વાંગે હીન લક્ષપૂર્વ અને નવસે કોટિ સાગરોપમનું અંતર થશે. કાંકદી નગરીમાં સુગ્રીવ રાજા અને રામાદેવીના પુત્ર સુવિધિ નામે નવમા તીર્થકર થશે. તેમનો શૈતવર્ણ, બે લક્ષ પૂર્વ આયુષ્ય અને એકસો ધનુષની કાયા થશે, વ્રતપર્યાય અદ્યાવીસ પૂર્વાંગે હીન લક્ષ પૂર્વ અને નેવું કોટી સાગરોપમનું અંતર થશે; ભદ્રિલપુરમાં દફરથ રાજા અને નંદા દેવીની પુત્ર શીતળ નામે દશમા તીર્થકર થશે. તેમનો સુવર્ણના જેવો વર્ણ, લક્ષ પૂર્વનું આયુષ્ય, નેવું ધનુષની કાયા, પચીસ હજાર પૂર્વનો વ્રતપર્યાય અને નવ કોટી સાગરોપમનું અંતર થશે. સિંહપુરમાં વિષણુ રાજા અને વિષણુદેવીના પુત્ર શ્રેયાંસ નામે અગિયારમા તીર્થકરની સુવર્ણ જેવી કાંતિ, અંશો ધનુષની કાયા, ચોરાશી લક્ષ વર્ષનું આયુષ્ય, એકવીસ લાખ વર્ષનો વ્રતપર્યાય તથા છત્રીસ હજાર અને છાસઠ લાખ વર્ષે તથા સો સાગરોપમે ન્યૂન એક કરોડ સાગરોપમનું અંતર થશે; ચંપાપુરીમાં વસુપૂર્જ્ય રાજા અને જ્યાદેવીના પુત્ર વાસુપૂર્જ્ય નામે બારમા તીર્થકર થશે; તેમનો રક્તવર્ણ, બોંતેર લાખ વર્ષનું આયુષ્ય અને સિતેર ધનુષ પ્રમાણ કાયા થશે; એમનો ચોપન લાખ વર્ષનો દીક્ષાપર્યાય અને ચોપન સાગરોપમનું અંતર થશે. કાંપિલ્ય નામે નગરમાં કૃતવર્મા રાજા અને શ્યામાદેવીના પુત્ર વિમલ નામના તેરમા તીર્થકર થશે; તેમનું સાઈ લાખ વર્ષનું આયુષ્ય, સુવર્ણના જેવો વર્ણ અને સાઈ ધનુષની કાયા થશે; એમને વ્રતમાં પંદર લક્ષ વર્ષ વ્યતીત થશે અને વાસુપૂર્જ્ય તથા તેમના મોક્ષમાં ત્રીસ સાગરોપમનું અંતર થશે. અયોધ્યામાં સિંહસેન રાજા અને સુયશાદેવીના પુત્ર અનંત નામે ભગવાન ચૌદ્રમા તીર્થકર થશે; તેમની સુવર્ણના જેવી કાંતિ ત્રીસ લાખ વર્ષ આયુષ્ય અને પચાસ ધનુષ ઉન્નત કાયા થશે; એમનો સાડાસાત લાખ વર્ષનો વ્રતપર્યાય તથા વિમલનાથ અને તેમનો મોક્ષ વચ્ચે નવ સાગરોપમનું અંતર થશે. રત્નપુરમાં ભાનુરાજા અને સુવ્રતા દેવીના પુત્ર ધર્મ નામે પંદરમા તીર્થકર થશે; તેમનો સુવર્ણનો દેહ દશ લાખ વર્ષનું આયુષ્ય અને પિસ્તાલીસ ધનુષની કાયા થશે; એમનો અઢી લાખ વર્ષનો વ્રત પર્યાય અને અનંતનાથ તથા તેમના મોક્ષ વચ્ચે

^१ ચોરાશી લાખ વર્ષ

ચાર સાગરોપમનું અંતર થશે. ગજપુર નગરમાં વિશ્વસેન રાજા અને અચિરાદેવીના પુત્ર શાંતિ નામે સોળમાં તીર્થકર થશે, તેમનો સુવર્ણ વર્ણ, એક લાખ વર્ષનું આયુષ્ય, ચાળીશ ધનુષની કાયા, પછી ગજપુરમાં શૂરરાજ અને શ્રીદેવી રાણીના પુત્ર કુંથુ નામના સતતરમા તીર્થકર થશે; તેમનો સુવર્ણ જેવો વર્ણ, પંચાશું હજાર વર્ષનું આયુષ્ય અને પાંત્રીસ ધનુષની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય ત્રેવીશ હજાર અને સાડા સતતસો વર્ષનો અને શાંતિનાથ તથા તેમના મોક્ષમાં અર્દ્ધ પલ્યોપમનું અંતર થશે. તે જ ગજપુર નગરમાં સુદર્શન રાજા અને દેવી રાણીના અર નામે પુત્ર અઢારમા તીર્થકર થશે; તેમની સુર્વણ જેવી કાંતિ, ચોરાશી હજાર વર્ષનું આયુષ્ય અને ત્રીશ ધનુષની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય એકવીશ હજાર વર્ષ અને કુંથુનાથ તથા તેમના નિર્વાણમાં એક હજાર કોઠ વર્ષ ન્યુન પલ્યોપમના ચોથા ભાગનું અંતર થશે. મિથિલા નગરીમાં કુલભરાજા અને પ્રભાવતી દેવીના પુત્ર મહલીનાથ ઓગાણીસમા તીર્થકર થશે; તેમનો નીલવર્ણ, પંચાવન હજાર વર્ષનું આયુષ એ પચ્ચીશ ધનુષની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય ચોપન હજાર નવસો વર્ષ તથા મોક્ષમાં એક હજાર કોટીવર્ષનું અંતર થશે. રાજગૃહ નગરમાં સુમિત્ર રાજા અને પદ્માદેવીના પુત્ર મુનિસુવ્રત નામે વીશમા તીર્થકર થશે; તેમની કૃષ્ણવર્ણ, ત્રીશ હજાર વર્ષનું આયુષ અને વીશ ધનુષની કાયા થશે. એમનો વ્રતપર્યાય સાડા સાત હજાર વર્ષ અને મોક્ષમાં ચોપન લાખ વર્ષનું અંતર થશે. મિથિલા નગરીમાં વિજય રાજા અને વામાદેવીના પુત્ર નમિ નામે એકવીશમા તીર્થકર સુવર્ણ જેવા વર્ણવાળા, દશ હજાર વર્ષના આયુવાળા અને પંદર ધનુષની કાયાવાળા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય અઢી હજાર વર્ષ અને મુનિસુવ્રત તથા તેમના મોક્ષમાં છ લાખ વર્ષનું અંતર થશે. શૌર્યપુરમાં સમુદ્રવિજય રાજા અને શિવાદેવીના પુત્ર નેમિ નામે બાવીશમા તીર્થકર થશે; તેમનો શ્યામ વર્ણ, હજાર વર્ષનું આયુષ અને દશ ધનુષની કાયા થશે. એમનો વ્રતપર્યાય સાતશેં વર્ષ અને નમિનાથ તથા તેમના મોક્ષમાં પાંચ લાખ વર્ષનું અંતર થશે. વારાણસી (કાશી) નગરીમાં અથસેન રાજા અને વામારાણીના પુત્ર પાર્શ્વનાથ નામે ત્રેવીશમા તીર્થકર થશે; તેમનો નીલવર્ણ, સો વર્ષનું આયુષ અને નવ હાથની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય સિત્તેર વર્ષ અને મોક્ષમાં ત્યાસી હજાર અને સાડા સાતશેં વર્ષનું અંતર થશે; ક્ષત્રિયકુંડ ગ્રામમાં સિદ્ધાર્થ રાજા અને ત્રિશલા દેવીના પુત્ર મહાવીર નામે ચોવીસમા તીર્થકર થશે; તેમનો સુવર્ણ જેવો વર્ણ, બદ્ધોતેર વર્ષનું આયુષ્ય અને સાત હાથની કાયા થશે; એમનો વ્રતપર્યાય બેતાળીસ વર્ષ અને પાર્શ્વનાથના મોક્ષ તથા તેમના મોક્ષ વર્ચ્યે અઢીસેં વર્ષનું અંતર થશે.

પુંરીક વળે ગણધરોથી પરિવરેલા ઋષભસ્વામી વિહારના મિથથી પૃથ્વીને પવિત્ર કરતાં ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યા. કોશલ દેશના લોકોને પુત્રની જેમ કૃપાથી ધર્મમાં કુશળ કરતા, જાણે પરિચયવાળા હોય તેમ ભગધ દેશના લોકોને તપમાં ગ્રવીણ કરતા, કમલના કોશને સૂર્ય જેમ વિકસ્વર કરે તેમ કાશી દેશના લોકોને પ્રબોધ કરતા, સમુદ્રને ચંદ્રની જેમ દશાંણ દેશને આનંદ આપતા, મૂર્છા પામેલાને સાવધાન કરતા હોય તેમ ચેદી દેશને સચેત (જ્ઞાનવાળો) કરતા, મોટા વત્સો (બળદો) ની જેમ માલવ દેશની પાસે ધર્મધુરાને વહન કરાવતા, દેવતાઓની જેમ ગુર્જર દેશને પાપરહિત આશયવાળો કરતા અને વૈઘની જેમ સૌરાષ્ટ્ર દેશવાસીને પટુ (સાવધાન) કરતા મહાત્મા ઋષભદેવ શત્રુંજય પર્વતે આવ્યા.

ત્યાં દેવતાઓએ તત્કાળ બનાવેલા સમવસરણમાં સર્વહિતકારી પ્રભુ બેઠા અને દેશના આપવા લાગ્યા. એકદા બીજે વિહાર કરવાની ઈરછાથી જગદ્ગુરુએ ગણધરમાં પુંરીક ગણધરને આશા કરી કે ‘હે મહામુનિ ! અમે અહીંથી બીજે વિહાર કરીશું અને તમે કોટિ મુનિ સાથે અહીં જ રહો. આ ક્ષેત્રના પ્રભાવથી પરિવાર સહિત તમને થોડા કાળમાં કેવળજ્ઞાન ઉત્પત્ત થશે અને શૈલેશી ધ્યાનને કરતા

તમે પરિવાર સહિત આ જ પર્વત ઉપર મોક્ષ ગ્રાપ્ત કરશો' પ્રભુની એ આજ્ઞા અંગીકાર કરીને સંવેગવાળા તેઓ પ્રભુના જેવી મધુર વાણીથી બીજા શ્રમણો પ્રત્યે પ્રમાણે આ કહેવા લાગ્યા—

* પુંડરીક ગણધરનું નિર્વાણ :

'હે મુનિઓ ! જ્યની ઈચ્છાવાળાઓને સીમાણાની ભૂમિને સાધનાર કિલાની જેમ મોક્ષની ઈચ્છાવાળાઓને આ પર્વત ક્ષેત્રના પ્રભાવથી સિદ્ધિને આપનારો છે, તો હવે આપણે મુક્તિના બીજા સાધન રૂપે સંલેખના કરવી જોઈએ. તે સંલેખના દ્રવ્યથી અને ભાવથી એમ બે પ્રકારની છે. સાધુઓએ સર્વ પ્રકારના ઉન્માદ અને મહારોગના નિદાનનું શોષણ કરવું તે દ્રવ્ય સંલેખના કહેવાય છે, અને રાગ, દ્વેષ, મોહ અને સર્વ કષાયરૂપ સ્વાભાવિક શત્રુઓનો વિચ્છેદ કરવો તે ભાવ સંલેખના કહેવાય છે.' એ પ્રમાણે કહીને પુંડરીક ગણધરે કોટિ શ્રમણોની સાથે પ્રથમ સર્વ પ્રકારના સૂક્ષ્મ અને બાદર અતિચારની આલોચના કરી અને પછી અતિ શુદ્ધિને માટે ફરીથી મહાક્રતનું આરોહણ કર્યું, કારણ કે વખ્ને બે-ત્રણ વખત ધોવું તે જેમ વિશેષ નિર્મળતાનું કારણ છે, તેમ અતિચારથી વિશેષ રીતે શુદ્ધ થવું તે વિશેષ નિર્મળતાનું કારણ છે. પછી 'સર્વ જીવો મને ક્ષમા કરો, હું સર્વના અપરાધ ખમું છું, મારે સર્વ ગ્રાણીઓની સાથે મૈત્રી છે, કોઈની સાથે મારે વેર નથી' એવી રીતે કહીને આગાર રહિત અને દુષ્કર એવું ભવચરિમ અનશન વ્રત તેમણે સર્વ શ્રમણોની સાથે ગ્રહણ કર્યું. ક્ષપક શ્રેણીમાં આકૃદ્ધ થયેલા તે પરાક્રમી પુંડરીક ગણધરના સર્વ ઘાતીકર્મ જીર્ણ દોરડાની જેમ ચોતરફથી ક્ષય થઈ ગયાં. બીજા સર્વ સાધુઓના ઘાતીકર્મ પણ તત્કાળ ક્ષય થઈ ગયાં, કારણ કે તપ સર્વને સાધારણ છે. એક માસની સંલેખનાને અંતે ચૈત્ર માસની પૂર્ણિમાને દિવસે પ્રથમ પુંડરીક ગણધરને કેવળજ્ઞાન થયું અને પછી બીજા સર્વ સાધુઓને કેવળજ્ઞાન થયું. શુક્લ ધ્યાનને ચોથે પાયે સ્થિત થયેલા તે અયોગીઓ બાકી રહેલા અધાતીકર્મનો ક્ષય કરી મોક્ષપદ પામ્યા. તે વખતે દેવતાઓએ સ્વર્ગમાંથી આવીને મહુદેવીની જેમ ભક્તિથી તેમના મોક્ષગમનનો ઉત્સવ કર્યો. ભગવાન ઋષભસ્વામી જેમ પ્રથમ તીર્થકર થયા તેમ એ પર્વત પણ ત્યારથી પ્રથમ તીર્થરૂપ થયો. એક સાધુ સિદ્ધ થાય તે સ્થાન પણ પવિત્ર તીર્થ કહેવાય છે, તો જ્યાં સંખ્યાબંધ મહર્ષિઓ સિદ્ધ થયા તેની પવિત્રતાની ઉત્કૃષ્ટતા વિશે શું કહેવું ?

એ શત્રુંજ્ય ગિરિ ઉપર રાજાએ મેરુ પર્વતની ચૂલિકાની સ્પર્ધા કરનારું રત્ન શિલામય એક ચૈત્ય કરાવ્યું અને અંતઃકરણની મધ્યમાં ચેતનાની જેમ તેની મધ્યે પુંડરીકજીની પ્રતિમા સહિત ભગવંત ઋષભસ્વામીની પ્રતિમા સ્થાપન કરી.

ભગવાન ઋષભદેવજી જુદા જુદા દેશમાં વિહાર કરીને, ચક્ષુદાનથી અંધની જેમ ભાવિ ગ્રાણીઓને બોધિબીજ (સમકિત)ના દાનથી અનુગ્રહ કરતા હતા. કેવળજ્ઞાન થયું ત્યારથી માંડીને પ્રભુના પરિવારમાં ચોરાસી હજાર સાધુઓ, ત્રણ લાખ સાધીઓ, ત્રણ લાખને પચાસ હજાર શ્રાવકો, પાંચ લાખને ચોપ્પન હજાર શ્રાવિકાઓ, ચાર હજાર સાતસોને પચાસ ચૌં પૂર્વી, નવ હજાર અવધિજ્ઞાની, વીસ હજાર કેવળજ્ઞાની, અને છસો વૈક્ષિયલબ્ધિવાળા, બાર હજારને સાડાછસો મન:પર્યવજ્ઞાની, તેટલા જ વાદીઓ, અને બાવીસ હજાર અનુત્તર વિમાનવાસી મહાત્માઓ થયા. વ્યવહારમાં જેમ પ્રજાનું સ્થાપન કર્યું હતું તેમ આદિ તીર્થકરે ધર્મમાર્ગમાં એ પ્રમાણે ચતુર્વિધ સંધને સ્થાપન કર્યો. દીક્ષા સમયથી લક્ષ પૂર્વ ગયા તે સમયે પોતાનો મોક્ષકાળ જાણી એ મહાત્મા પ્રભુ અસ્તાપદ તરફ પદ્ધાર્યા. તે પર્વતની નજીક આવેલા પ્રભુ પરિવાર સહિત મોક્ષ રૂપી મહેલનાં પગથિયાં જેવા તે પર્વત ઉપર ચહ્યા. ત્યાં દશ હજાર મુનિઓની સાથે ભગવંતે ચતુર્દ્શા તપ (૪ ઉપવાસ) કરીને પાદપોગમન અનશન કર્યું.

વિશ્વપતિ પ્રભુને આવી રીતે રહેલા જાણીને પર્વતપાલકોએ તે વૃત્તાંતનું તરત જ ભરત રાજાને નિવેદન કર્યું. પ્રભુએ ચતુર્વિધ આહારનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યાં સાંભળીને જાણે અંતઃકરણમાં શલ્ય પેઢું હોય

તेम भरतराजा शोकथी पीडित थया अने वृक्ष जेम जળबिंदुने मूळे तेम धाणा शोकरूपी अग्रिथी पीडित थयेला तेओ अश्रुजण छोडवा लाग्या. पछी दुर्वार दुःखथी पीडित थयेला तेओ अंतःपुर परिवार सहित पाठ्यारीपाणे अष्टापद तरफ चाल्या. रस्ते कठोर कांकराने पाण तेमाणे गाण्या नहीं, कारण के हर्षनी जेम शोकथी पाण वेदना जाणाती नथी. कांकराथी दबायेला तेमनां चरणमांथी रुधिरनी धारा थवा लागी, तेथी जाणे अगताना चिह्नवाणी होय तेवी तेना चरणनां पगलांनी पद्धति पडती गई. पर्वत उपर चढवामां एक क्षाण वार पाण गतिमां विघ्न न थाओ ऐम धारी तेओ सामा आवेला लोकोने पाण गाणता नहोता. तेना माथा उपर छत हतुं तो पाण ते धाणा तम थर्हने चालता उतां, कारण के मनां ताप अद्यूतवृष्टिथी पाण शांत थतो नथी. शोकमां ग्रस्त थयेला यकी हाथनो टेको आपनारा सेवकोने पाण मार्गमां आडा आवेलां वृक्षोनी शाखाना प्रांत भागनी जेम दूर करता उता. सरिताना विस्तारमां चालती नाव जेम तीरनां वृक्षोने पाइण करे तेम आगण चालता छटीदारोने तेओ वेगथी पाइण करता उता. चितना वेगनी जेम चालवामां उत्सुक ऐवा ते पगले पगले स्खलना पामती चामरधारिणी राह पाण जेता नहोता. वेग चालवाथी उिछणी उिछणी छाती उपर अथडावाने लीघे तूटी गयेला भोतीना हारने पाण तेओ जाणता नहोता. प्रभुना ध्यानमां तेनुं मन होवाथी तेओ पासे रहेला गिरिपालकोने फरी फरीने प्रभुनी वार्ता पूछवा माटे छटीदार पासे बोलावता उता. ध्यानमां रहेला योगीनी जेम ते राजा बीजुं कांઈ जेता नहोता अने कोईनुं वयन सांभणता नहोता, फक्त प्रभुनुं ज ध्यान करता उता. वेग वडे मार्गनि जाणे टूंको नानो कर्यो होय तेम पवननी जेम क्षण वारमां तेओ अष्टापद नजुक आवी पहिंच्या. साधारण माणसनी जेम पाठ्यारी छतां परिश्रमने जाणारा यकी अष्टापद उपर चड्या. शोक हर्षथी आकुल थयेला तेमाणे पर्यक्षासने बेठेला जगत्पतिने जोया. प्रभुने प्रदक्षिणा दृ, वंदन करी, देहनी छायानी जेम पउजे बेसी चकवर्ती उपासना करवा लाग्या.

‘प्रभुनो आवो प्रभाव वर्तता छतां ईन्द्रो उपर केम बेसी रव्या छे !’ ऐम जाण्युं होय तेम ते समये ईन्द्रनां आसनो चलायमान थयां. अवधिज्ञाने आसनकंपनुं कारण जाणी योसठे ईन्द्रो ते वर्षते प्रभुनी पासे आव्या. जगत्पतिने प्रदक्षिणा करी, विषाढ पामी जाणे ओणभी लीघा होय तेम भगवंतनी पासे तेओ बेठा.

आ अवसर्पिणीना त्रीजा आराना नवाणुं पक्ष बाडी रव्या उता त्यारे माघमासनी कृष्ण त्रयोदशीना पूर्वान्हे, अभिजितनक्षत्रमां चंद्रनो योग आव्यो हतो ते समये पर्यक्षासने बेठेला ते महात्मा प्रभुअे बादर काययोगमां रही बादर मनयोग अने बादर वयनयोगने रुंदी दीघा. पछी सूक्ष्म काययोगनो आश्रय करी बादर काययोग, सूक्ष्म मनयोग तथा सूक्ष्म वयनयोगने रुंद्या. छेवटे सूक्ष्म काययोगनो पाण अस्त करीने सूक्ष्मक्षिय नामना शुक्लध्यानना त्रीजा पायाना अंत ग्राप्त थया. ते पछी उच्छिन्नक्षिय नामनो शुक्लध्याननो योथो पायो, जेनो पांच हुस्वाक्षरना उच्चार जेटलो ज मात्र काण छे तेनो आश्रय कर्यो. पछी केवणज्ञानी, केवणदर्शनी, सर्व दुःखथी रहित, अष्टकर्म क्षीण करी सर्व अर्थने निष्ठित (सिद्ध) करनार, अनंत वीर्य, अनंतसुख अने अनंत ऋद्धिवंत-प्रभु बंधना अलावथी ऐरंडिणना बीजनी जेम उर्ध्व गतिवाणा थर्हने, स्वभावथी सरल ऐवा मार्ग वडे लोकाग्रने ग्रास थया. दश हजार श्रमणाने पाण अनशनग्रत लाई क्षपक श्रेष्ठीमां आउढ थतां केवणज्ञान उत्पन्न थयुं अने मन वयन कायाना योगने सर्व प्रकारे रुंदी तेओ पाण स्वामीनी जेम तत्काण परम पृष्ठने पाम्या.

प्रभुना निर्वाण कल्याणक समये, सुखना लेशने पाण नहीं जेनारा नारकीओनो पाण क्षण वार दुःखाग्नि शांत थयो. ते समये महाशोकथी आकांत थयेला चकवर्ती वज्ञथी पर्वतनी जेम तत्काण मूर्च्छित थर्ह पृथ्वी उपर पड्या. भगवंतना विरहनुं मोहुं दुःख आवी पड्युं; परंतु ते समये दुःख शिथिल थवामां कारणज्ञप रुद्नने कोई जाणतुं नहोतुं, तेथी यकीने ए जाणाववा माटे तथा तेने हृदयनो खुलासो

થવા માટે ઈન્દ્રે ચકીને પાસે બેસી મોટો પોકાર કરી રૂધન કર્યું. ઈન્દ્રની પછવાડે સર્વ દેવતાઓએ પણ રૂધન કર્યું કારણ કે તુલ્ય દુઃખવાળા પ્રાણીઓની સરખી જ ચેષ્ટા થાય છે. એ સર્વનું રૂધન સાંભળી, સંજ્ઞા પામી ચકીએ પણ જાણે બ્રહ્માંડને ફોડી નાખતા હોય તેવો ઊંચે સ્વરે આકંદ કર્યો. મોટા પ્રવાહના વેગથી જેમ પાળનો બંધ તૂટી જાય તેમ એવા રૂધનથી મહારાજાની મોટી શોકગ્રંથિ પણ તૂટી ગઈ. તે સમયે દેવ, અસુર અને મનુષ્યોના રૂધનથી જાણે ત્રણ લોકમાં કરુણારસ એક છત્રવાળો (રાજા) થયો હોય તેમ જગ્ઘાવા લાગ્યું. ત્યારથી માંડીને જગતમાં પ્રાણીઓને શોકસંભવ સમયે શોકશાલ્યને વિશલ્ય કરનાર રૂધનનો પ્રચાર પ્રવત્ત્યો. ભરતરાજ સ્વાભાવિક ધૈર્યને પણ છોડી દઈ, દુઃખિત થઈ, તિર્યંયોને પણ રોવરાવતા, આ પ્રમાણે વિલાપ કરવા લાગ્યા:- હે જગદ્બંધુ ! હે કૃપારસસાગર ! અમને અજ્ઞાને આ સંસાર અરણ્યમાં કેમ છોડી દો છો ? દીપક સિવાય જેમ અંધકારમાં રહી ન શકાય તેમ કેવળજ્ઞાનથી સર્વત્ર પ્રકાશ કરનારા તમારા સિવાય અમે આ સંસારમાં કેમ રહી શકીશું હે પરમેશ્વર ! છભરસ્થ પ્રાણીની જેમ તમે મૌન કેમ અંગીકાર કર્યું છે ! મૌનનો ત્યાગ કરીને દેશના દો; હવે દેશના આપી મનુષ્યોનો શું અનુગ્રહ નહીં કરો ? હે ભગવાન ! તમે લોકાગ્રમાં જાઓ છો તેથી બોલતા નથી, પણ મને દુઃખી જાણીને આ મારા બંધુઓ પણ મને કેમ બોલાવતા નથી ? પણ અહો ! મેં જાણ્યું કે તેઓ તો સ્વામીના જ અનુગામી છે તો સ્વામી ન બોલે ત્યારે તેઓ પણ કેમ બોલે ? અહો ! આપણા કુળમાં મારા સિવાય બીજો કોઈ આપનો અનુગામી નથી થયો એવો નથી. ત્રણ જગતને રક્ષણ કરનારા આપ, બાહુભલી વગેરે મારા નાના ભાઈઓ, બ્રાહ્મી અને સુંદરી બહેનો, પુંડરીકાદિક મારા પુત્રો, શ્રેયાંસ વગેરે પૌત્રોએ સર્વ કર્મ રૂપી શત્રુને હણી લોકાગ્રમાં ગયા, તે છતાં હું અધાપિ જીવિતને પ્રિય માનતો જીવું છું !

આવા શોકથી નિર્વેદ પામેલા ચકીને, જાણે મરવાને ઈચ્છાતા હોય તેવા જોઈને ઈન્દ્રે બોધ આપવાનો આરંભ કર્યો- “હે મહાસત્ત્વ ભરત ! આપણા આ સ્વામી પોતે સંસારસમુક્ત તરી ગયા છે અને બીજાઓને તેમણે તાર્યા છે. કિનારા વડે મહાનદીની જેમ એમણે પ્રવત્તિવેલા શાસન વડે સંસારી પ્રાણીઓ સંસારસમુક્ત તરશે. એ પ્રભુ પોતે કૃતકૃત્ય થયેલા છે અને બીજા લોકોને કૃતાર્થ કરવાને લક્ષ પૂર્વ પર્યત દીક્ષાવસ્થામાં રહેલા છે. હે રાજા ! સર્વ લોકનો અનુગ્રહ કરીને મોકષસ્થાનમાં ગયેલા એ જગત્પતિનો શા માટે તમે શોક કરો છો ? જેઓ મૃત્યુ પામીને મહા દુઃખના ગૃહદ્રષ્ટ ચોરાસી લક્ષયોનિમાં અનેક વખત સંચરે છે તેમનો શોક કરવો ઘટે, પણ મૃત્યુ પામી મોકષસ્થાનમાં જનારનો શોક ન ઘટે ! માટે હે રાજા ! સાધારણ માણસની જેમ પ્રભુનો શોક કરતાં કેમ લાજ પામતા નથી ? શોચ કરનાર તમને અને શોચનીય પ્રભુને બંનેને શોક ઉચ્ચિત નથી. જે એક વખત પણ પ્રભુની ધર્મદીશના સાંભળો છે તે શોક અને હર્ષથી જિતાતો નથી, તો તમે બહુવાર દેશના સાંભળ્યા છતાં કેમ જીતાઓ છો ? મોટા સમુક્તને જેમ ક્ષોભ, મેરુ પર્વતને કંપ, પૃથ્વીને ઉધ્વર્તન, વજને કુંઈત્વ, અમૃતને વિરસતા અને ચંદ્રને જેમ ઉભણતા-એ અસંભવિત છે તેમ તમારે રૂધન કરવું તે પણ અસંભવિત છે. હે ધરાધિપતિ ! તમે ધીરા થાઓ અને તમારા આત્માને જાણો, કેમ કે તમે ત્રણ જગત્ના પ્રભુ અને એક ધીર એવા ભગવંતના પુત્ર છો.” એવી રીતે ગોત્રના વૃદ્ધ જનની જેમ ઈન્દ્રે પ્રબોધ કરેલા ભરતરાજએ જળ જેમ શીતળતાને ધારણ કરે તેમ પોતાનું સ્વાભાવિક ધૈર્ય ધારણ કર્યું.

પછી ઈન્દ્રે તત્કાળ પ્રભુના અંગના સંસ્કારને માટે ઉપસ્કર લાવવા આભિયોગિક દેવતાને આજ્ઞા કરી એટલે તેઓ નંદનવનમાંથી ગોશીર્ષ ચંદનનાં કાઢો લઈ આવ્યા. ઈન્દ્રના આદેશથી દેવતાઓએ ગોશીર્ષ ચંદનનાં કાઢીથી પૂર્વ દિશામાં પ્રભુના દેહને માટે એક ગોળાકાર ચિતા રચી; ઈક્ષવાકુ કુળમાં જળમેલા મહર્ષિઓને માટે દક્ષિણ દિશામાં બીજી ત્રિકોણાકાર ચિતા રચી અને બીજા સાધુઓને માટે પાંચેય દિશામાં ત્રીજી ચોરસ ચિતા ખડકી. પછી જાણે પુષ્કરાવર્તમેઘ હોય તેવા દેવતાઓની પાસે ઈન્દ્રે સત્ત્વર ક્ષીરસમુક્તનું જળ મગાવ્યું. તે જળ વડે ભગવંતના શરીરને સ્નાન કરાવ્યું અને તેની ઉપર ગોશીર્ષચંદનના

રસથી વિલેપન કર્યું. પછી હુંસ લક્ષણવાળા (શેત) દેવદુષ્ય વસ્ત્રથી પરમેશ્વરના શરીરને આર્થાદન કર્યું અને દિવ્ય માણેકના આભૂતાણોથી દેવાગ્રણી ઈન્દ્રે તેને ચોતરફથી વિભૂષિત કર્યું. બીજા દેવતાઓએ બીજા મુનિનાં શરીરોની ઈન્દ્રની જેમ ભક્તિથી સ્નાનાછિક સર્વ કિયા કરી. પછી દેવતાઓએ જાણે જુદા જુદા લાલ્યા હોય તેવા ત્રણ જગતનાં સારા-સારા રત્નોથી સહસ્ર પુરુષોએ વહુન કરવા યોગ્ય ત્રણ શિબિકાઓ તૈયાર કરી. ઈન્દ્રે પ્રભુનાં ચરણને પ્રાણામ કરી, સ્વામીના શરીરને મસ્તક પર ઉપાડી શિબિકામાં આકૃષ્ટ કર્યું. બીજા દેવોએ મોક્ષમાર્ગના અતિથિ એવા ઈક્ષવાકુ વંશના મુનિઓના શરીરને મસ્તક ઉપર ઉપાડી બીજી શિબિકામાં અને બીજા સર્વ સાધુઓના શરીરને ત્રીજી શિબિકામાં સ્થાપન કર્યા. પ્રભુના શરીરવાળી શિબિકાને ઈન્દ્રે પોતે વહુન કરી અને બીજા મુનિઓની શિબિકાઓને દેવતાઓએ ઉપાડી. તે વખતે અપ્સરાઓ એક તરફ તાલબંધ રાસડા લેતી હતી અને એક તરફ મધુર સ્વરથી ગાયન કરતી હતી. શિબિકાની આગળ દેવતાઓ ધૂપિયાં લઈને ચાલતા હતા. ધૂપિયાંના ધુમાડાના મિષથી જાણે તેઓ શોકથી અશ્વપાત કરતા હોય તેવા જણાતા હતા. કોઈ દેવતાઓ શિબિકા ઉપર પુષ્પો નાખતા હતા; કોઈ શોષ તરીકે તે પુષ્પોને ગ્રહણ કરતા હતા; કોઈ આગળ દેવદુષ્ય વસ્ત્રોના તોરણ કરતા હતા; કોઈ યક્ષકર્દમથી આગળ છંટકાવ કરતા હતા; કોઈ ગોફણથી-પાખાણની જેમ શિબિકા આગળ આળોટતા હતા અને કોઈ જાણે મોહચૂર્ણ (માજમ)થી હણાયા હોય તેમ પાછળ દોડતા હતા. કોઈ ‘હે નાથ ! હે નાથ !’ એવા શહદો કરતા હતા; ‘અરે અમે મંદભાગી માર્યા ગયા,’ એમ બોલી પોતાના આત્માની નિંદા કરતા હતાં; કોઈ ‘હે નાથ ! અમને શિક્ષા આપો’ એમ યાચના કરતા હતાં. કોઈ ! ‘હવે અમારો ધર્મસંશય કોણ છેદશો ?’ એમ બોલતા હતા; ‘અમે અંધની જેમ હવે કયાં જઈશું !’ એમ બોલી કોઈ પશ્ચાત્તાપ કરતા હતા; અને કોઈ ‘અમને પૃથ્વી માર્ગ આપો’ એમ ઈરછતા હતા.

એ પ્રમાણે વર્તન કરતા અને વાજિંગ્રો વગાડતા દેવતાઓ તથા ઈન્દ્ર તે શિબિકાને ચિતા પાસે લાલ્યા. ત્યાં ફૂત્યજ્ઞ ઈન્દ્રે પુત્રની જેમ પ્રભુના દેહને ધીમે ધીમે પૂર્વ દિશાની ચિતામાં મૂક્યો; બીજા દેવતાઓએ સહોદરની જેમ ઈક્ષવાકુ કુળના મુનિઓના શરીરને દક્ષિણ દિશાની ચિતામાં સ્થાપન કર્યા અને ઉચિતને જાણાનારા-બીજા સાધુઓના શરીરને પશ્ચિમ દિશાની ચિતામાં સ્થાપન કર્યા. પછી ઈન્દ્રની આજાથી અગ્રિકુમાર દેવતાઓએ તે ચિતાઓમાં અગ્રિ પ્રગટ કર્યો અને વાયુકુમાર દેવોએ વાયુ વિકુર્યો, એટલે ચોતરફ અગ્રિ પ્રગટ થઈને બળવા લાગ્યો. દેવતાઓ ચિતામાં પુર્જળ કર્પૂર અને ઘડા ભરી ભરીને ધી તથા મધ નાખવા લાગ્યા. જ્યારે અસ્થિ સિવાય બાકીની સર્વ ધાતુઓ દંગ થઈ ત્યારે મેઘકુમાર દેવતાઓએ ક્ષીરસમુક્રના જળથી ચિતાંગ્રિને શાંત કર્યો. પછી પોતાના વિમાનમાં પ્રતિમાની જેમ પૂજા કરવાને માટે સૌધર્મેદ્ર પ્રભુની ઉપલી જમણી દાઢ ગ્રહણ કરી, ઈશાન ઈન્દ્રે પ્રભુની ઉપલી ડાબી દાઢ ગ્રહણ કરી, ચમરેદ્ર નીચલી જમણી દાઢ ગ્રહણ કરી, બલિ ઈન્દ્રે નીચેની ડાબી દાઢ ગ્રહણ કરી, બીજા ઈન્દ્રોએ પ્રભુના બાકીના દાંત ગ્રહણ કર્યો અને દેવતાઓએ બીજાં અસ્થિ ગ્રહણ કર્યો. તે વખતે જે શ્રાવકો અગ્રિ માગતા હતા તેમને દેવતાઓએ ત્રણ કુંડના અગ્રિ આપ્યા, તે અગ્રિ લેનારા અગ્રિણોત્ર બ્રાહ્મણો થયા. તેઓ પોતાને ઘેર જઈ પ્રભુના ચિતાંગ્રિને નિત્ય પૂજવા લાગ્યા અને ધનપતિ જેમ નિર્વાત પ્રદેશમાં રાખી લક્ષ્યિતનું રક્ષણ કરે, તેમ તેઓ તેનું રક્ષણ કરવા લાગ્યા. ઈક્ષવાકુ વંશના મુનિઓનો ચિતાંગ્રિ શાંત થઈ જતો તો તેને સ્વામીના ચિતાંગ્રિથી જાગૃત કરતા હતા અને બીજા મુનિઓના શાંત થયેલા ચિતાંગ્રિને ઈક્ષવાકુળના મુનિઓના ચિતાંગ્રિથી પ્રગટ કરતા હતા, પરંતુ બીજા સાધુઓના ચિતાંગ્રિનું બીજા બે ચિતાંગ્રિ સાથે તેઓ સંકમણ કરતા નહોતા; તે વિધિ અદ્યાપિ બ્રાહ્મણોમાં પ્રવર્ત્ત છે. કેટલાક

પ્રભુના ચિતાંગિની ભસ્મ લઈને ભક્તિથી તે ભસ્મને વંદન કરતા હતા અને શરીર ચોળતા હતા; ત્યાંથી ભસ્મભૂષણધારી તાપસો થયા.

પછી જાણે અષ્ટાપદગિરિના નવાં ત્રણ શિખરો હોય તેવા તે ચિતાસ્થાને દેવતાઓએ રત્નના ત્રણ સ્તૂપ (દેરીઓ) કર્યા. ત્યાંથી તેઓએ નંદીશરદીપે જઈ શાશ્વત પ્રતિમા સમીપે અષ્ટાન્હિકા ઉત્સવ કર્યો અને પછી ઈન્દ્ર સહિત સર્વ દેવતાઓ પોતપોતાને સ્થાને ગયા. ત્યાં તે ઈન્દ્રો પોતપોતાનાં વિમાનોમાં સુધર્માસભાની અંદર માણાવક સ્તંભ ઉપર વજભય ગોળ ડાબલામાં પ્રભુની દાઢોને આરોપણ કરીને પ્રતિદિવસ તેની પૂજા કરવા લાગ્યા. તેના પ્રભાવથી તેમને હુંમેશા વિજય મંગળ થવા લાગ્યું.

ભરતરાજાએ પ્રભુના સંસકર સમીપની ભૂમિ ઉપર ત્રણ ગાઉ ઊંચો અને જાણે મોક્ષમંદિરની વેદિકા હોય તેવો સિંહનિષધા નામે પ્રાસાદ રત્નમય પાખાણથી વાર્ષિકરત્ન પાસે કરાવ્યો. તેની ચોતરફ પ્રભુના સમવસરણાની જેમ સ્ફટિક રત્નના ચાર રમણીક દ્વાર કરાવ્યા, અને તે દરેક દ્વારની બંને તરફ શિવલક્ષ્મીના ભંડારની જેવા રત્નચંદનના સોળ કળશો રચાવ્યા. દરેક દ્વારે જાણે સાક્ષાત્ પુણ્યવલ્લી હોય તેવા સોળ સોળ રત્નમય તોરણો રચાવ્યાં, પ્રશસ્તિ લિપિના જેવી અષ્ટમાંગલિકની સોળ સોળ પંક્તિઓ રચી અને જાણે ચાર દિક્ક્પાળોની સભા ત્યાં લાવ્યા હોય તેવા વિશાળ મુખમંડપો કરાવ્યા. તે ચાર મુખમંડપોની આગળ ચાલતાં શ્રી વલ્લીમંડપની અંદર ચાર પ્રેક્ષાસદન મંડપો કરાવ્યા, તે પ્રેક્ષામંડપોની વચ્ચમાં સૂર્યબિંબને ઉપહાસ્ય કરનારા વજભય અક્ષવાટ રચ્યા અને દરેક અક્ષવાટની મધ્યમાં કમલમાં કર્ણિકાની જેમ એક એક મનોહર સિંહાસન રચ્યું. પ્રેક્ષામંડપની આગળ એકેક મણિપીઠિકા રચી; તેની ઉપર રત્નના મનોહર ચૈત્યસ્તૂપ રચ્યા અને તે દરેક ચૈત્યસ્તૂપમાં આકાશને પ્રકાશ કરનારી દરેક દિશાએ મોટી મણિપીઠિકા રચી. તે મણિપીઠિકાની ઉપર ચૈત્યસ્તૂપની સન્મુખ પાંચસે ઘનુષ્યના પ્રમાણવાળી રત્નનિર્મિત અંગવાળી, ઝાંખભાનન, વર્ષભાન, ચંદ્રભાન, વારિષેણ એ નામની ચાર, પર્યક્ષાસને બેઠેલી, મનોહર, નેત્રરૂપી પોયણાને ચંદ્રિકા સમાન, નંદીશર મહાદ્વાપના ચૈત્યની અંદર છે તેવી, શાશ્વત જિન પ્રતિમાઓ રચાવીને સ્થાપન કરી. તે દરેક ચૈત્યસ્તૂપની આગળ અમૃત્ય માણિક્યમય વિશાળ એવી સુંદર પીઠિકાઓ રચી. તે દરેક પીઠિકા ઉપર એક એક ચૈત્યવૃક્ષ રચ્યું. દરેક ચૈત્યવૃક્ષની પાસે બીજી એકેક મણિપીઠિકા રચી અને તેની ઉપર એકેક ઈન્દ્રધવજ રચ્યો. જાણે દરેક દિશાએ ધર્મો પોતાના જ્યસ્તંભ આરોપ્ય હોય તેવા તે ઈન્દ્રધવજ જણાતા હતા. દરેક ઈન્દ્રધવજની આગળ ત્રણ પગથિયાં અને તોરણોવાળી નંદા નામે પુષ્કરિણી (વાવડી) રચી. સ્વરચ્છ, શીતળ જળથી ભરેલી અને વિચિત્ર કમળોથી શોભતી તે પુષ્કરિણીઓ, દધિમુખ પર્વતના આધારભૂત પુષ્કરિણી જેવી મનોહર લાગતી હતી.

તે સિંહનિષધા નામના મહા ચૈત્યના મધ્ય ભાગમાં મોટી મણિપીઠિકા બનાવી અને સમવસરણાની જેમ તેના મધ્ય ભાગમાં વિચિત્ર રત્નમય એક દેવછંડક રચ્યો. તેની ઉપર વિવિધ વાર્ણિના વખ્ણનો ચંદરવો બનાવ્યો, તે અકાળે પણ સંધ્યાસમયના વાદળાની શોભા ઉત્પન્ન કરતો હતો. તે ચંદરવાની અંદર અને પણ વજભય અંકુશો રચ્યા હતા. તથાપિ ચંદરવાની શોભા તો નિરુંશ થઈ રહી હતી. તે અંકુશોમાં કુંભની જેવાં ગોળ અને આમળાનાં ફળ જેવાં સ્થૂળ મુક્તાફળોથી રચેલા અમૃતની ધારા જેવા દાર લટકતા હતા. તે દારના પ્રાંત ભાગમાં નિર્મળ મણિમાલિકા રચી, તે જાણે ત્રણ જગત્માંદે રહેલી મણિઓની ખાણોમાંથી વાનકી લાવ્યા હોય તેવી જણાતી હતી. મણિમાલિકાના પ્રાંત ભાગમાં રહેલી નિર્મળ વજભાલિકા, સખીઓની જેમ પોતાની કાંતિરૂપ ભુજાથી પરસ્પર આલિંગન કરતી હોય તેવી જણાતી હતી. તે ચૈત્યની ભર્તોમાં વિચિત્ર મણિમય ગવાક્ષ (ગોખલા) રચ્યા હતા, તેના પ્રભાપટલથી જાણે તેમાંથી જવનિકા (પડા) ઉત્પન્ન થયેલ હોય તેવા જણાતા હતા, તેમાં ભળતા અગરુ ધૂપના ધૂમાડા

તे पर्वत उपर नवी उत्पन्न थयेली नीलयूलिकाना भमने आपता हता.

हुवे पूर्वोक्त मध्य देवछंदनी उपर शैक्षेशी ध्यानमां वर्तती होय तेवी, दरेक प्रभुना पोतपोताना देहना मान जेवडी, पोतपोताना देहना वणुने धारणा करनारी, जाणे दरेक प्रभु पोते ज बिराजेला होय तेवी - ऋषभस्वामी वगेरे चोवीस अर्हतोनी निर्मण रत्नमय प्रतिमाओ रचीने स्थापन करी. तेमां सोण प्रतिमा सुवर्णानी, बे राजवर्त रत्ननी (श्याम), बे स्फटिक रत्ननी (उज्जवल), बे वैदुर्य मणिनी (नील) अने बे शोण मणिनी (रक्त) हती. ते सर्व प्रतिमाओना रोहिताक्ष मणिना (रक्त) आभासवाणा अंकरत्नमय (श्वेत) नभो हता, अने नाभि, केशना मूळ, जिह्वा, ताणु, श्रीवत्स, स्तनभाग तथा हाथपगानां तणियां-ये सुवर्णाना (रक्त) हतां; पांपणो, आंघनी कीकीओ, झृणां, भमर अने भस्तकना केश अरिष्टरत्नमय (श्याम) हतां; ओळ परवाणामय (रक्त) हता; दांत स्फटिक रत्नमय (श्वेत) हता, भस्तकनो भाग वज्मय हतो; अने नासिका अंदरथी रोहिताक्ष मणिना प्रतिसेक (आभास) वाणी-सुवर्णानी हती. प्रतिमानी दृष्टिओ लोहिताक्ष मणिना ग्रांत भागवाणी अने अंकमणिथी बनावेली हती. ऐवी रीते अनेक प्रकारना मणिथी बनावेली ते प्रतिमाओ अत्यंत शोभती हती.

ते दरेक प्रतिमानी पृथिव्ये एक एक यथायोग्य मानवाणी छत्रधारानी रत्नमय प्रतिमा बनावी हती अने ते छत्रधार प्रतिमाए कुरंटक पुण्यनी माणाए युक्त मोती तथा परवाणा वडे गूळेला अने स्फटिकमणिना दंडवाणा श्वेत छत्र धरी राख्यां हतां. दरेक प्रतिमानी बे बाजुओ रत्ननी चामर धरनारी बे प्रतिमाओ अने आगण नाग यक्ष, भूत अने कुङ्घधारनी बे बे प्रतिमाओ हती. अंजलि जेडीने रहेली अने सर्व अंगे उज्जवल ऐवी ते नागादिक देवोनी रत्नमय प्रतिमाओ जाणे त्यां तेओ प्रत्यक्ष बेढा होय तेवी शोभती हती.

देवछंदा उपर उज्जवल रत्नना चोवीस घंटाओ, संक्षिम करेला सूर्यबिंब जेवा माणिक्यनां दर्पणो, तेनी पासे योग्य स्थाने मूळेल सुवर्णानी दीवीओ, रत्नना करेतिया, नदीनी भमरीनी जेवी गोणाकार पुण्ययंगेरिओ, उतम अंगलूळाणा, आभूषणाना डाबला, सोनानां धूपियां तथा आरतीओ, रत्नोना मंगणीदीवा, रत्नोनी जारीओ, मनोहर रत्नमय थाणो, सुवर्णाना पात्रो, रत्नां चंदनकण्ठो, रत्नना सिंहासनो, रत्नमय अष्टमांगलिक सुवर्णाना तेलना डाबला, धूप राखवा माटे सुवर्णाना पात्रो, सुवर्णाना कमलहस्तक- ए सर्व चोवीसे अर्हतनी प्रतिमा पासे एक एक चोवीस चोवीस राख्यां हतां. ऐवी रीते नाना प्रकारनां रत्ननु अने त्रैलोक्यामां अति सुंदर वेवु ते चैत्य भरतयक्नी आक्षा थतां तत्काण सर्व प्रकारनी कलाने जाणानारा वार्षिकिरत्ने विधि प्रमाणे बनावी आप्यु. जाणे मूर्तिमान् धर्म होय तेवा चंद्रकांतमणिना गढथी, तथा चित्रमां आलेखेला ईहमृग (नहार), वृषभ, मगर, तुरंग, नर, किन्नर, पक्षी, बाणक, झुरमृग, अष्टापद, चमरीमृग, हाथी, वनलता अने कमणोथी जाणे घाणां वृक्षोवाणुं उद्यान होय तेवी विचित्र अने अद्भुत रचनाथी ते चैत्य अधिक शोभतुं हतुं. तेनी आसपास रत्नना स्तंभो गोठवेला हता. जाणे आकाशगंगानी उर्मिओ होय तेवी पताकाओथी ते मनोहर लागतुं हतुं, उंचा करेला सुवर्णाना ध्वजदंडोथी ते उन्नत जणातुं हतुं. अने निरंतर प्रसरता-ध्वजानी धूधरीओना अवाज्ञी विद्याधरोनी खीओनी कटीमेखलाना ध्वनिने अनुसरतुं हतुं. तेनी उपर विशाण कांतिवाणा पद्मरागमणिना ईडंथी, जाणे माणिक्य जेवली मुद्रिकावाणुं होय तेवुं ते शोभतुं हतुं. कोई ठेकाणे जाणे पद्मवित होय, कोई ठेकाणे जाणे बज्जरवाणुं होय, कोई ठेकाणे जाणे रोमांचित थयुं होय अने कोई ठेकाणे जाणे किरणोथी लिम होय तेवुं ते जणातुं हतुं. गोळयंदनना रसमय तिलकोथी तेने लांछित करेलुं हतुं. तेना याणतरना सांघेसांधा ऐवा भेणव्या हता के जाणे ते एक पाखाणथी बनावेलुं होय तेवुं जणातुं हतुं. ते चैत्यना नितंबभाणा उपर विचित्र येष्टाथी मनोहर लागती माणेकनी पूतणीओ गोळवेली हती. तेथी अप्सराओथी अधिष्ठित भेऱ पर्वतनी जेवुं ते शोभतुं हतुं. तेना द्वारनी बंने तरफ चंदन रसथी लीपेला बे कुंभो मूळेला हता, तेथी द्वारस्थणमां निष्पन्न थयेलां बे पुंडरीक कमणीयी

તે અંકિત હોય એવું લાગતું હતું. ધૂપિત કરીને તિરછી બાંધેલી લટકતી માળાઓથી તે રમણીક લાગતું હતું. પાંચ વર્ષાનાં પુષ્પથી તેના તળિયા ઉપર સુંદર પગર ભર્યા હતા; યમુના નદીની જેમ કલિંદ પર્વત પ્લાવિત રહે તેમ કપૂર, અગર અને કસ્તૂરીથી બનાવેલા ધૂપના ધૂમાડાથી હુંમેશાં તે વ્યાસ રહેતું હતું, આગળ બે બાજુએ અને પદ્ધવાડે સુંદર ચૈત્યવૃક્ષો તથા માણિક્યની પીઠિકાઓ રચેલી હતી, તેથી જાણે આભૂષણ ધર્યા હોય તેવું જણાતું હતું, અને અષ્ટાપદ પર્વતના શિખર ઉપર જાણે મસ્તકના મુગાટનું માણિક્ય ભૂષણ હોય તથા નંદીશ્વરાદ્ધિના ચૈત્યોની જાણે સ્પર્ધા કરતું હોય તેમ અતિ પવિત્રપણે તે શોભતું હતું.

તે ચૈત્યમાં ભરતરાજાએ પોતાના નવાણું ભાઈઓની દિવ્ય રત્નમય પ્રતિમા બેસાડી અને પ્રભુની સેવા કરતી એવી એક પોતાની પ્રતિમા પણ ત્યાં સ્થાપિત કરી, ભક્તિમાં અતૃપિતી એ પણ એક ચિહ્ન છે. ચૈત્યની બહાર ભગવાનનો એક સ્તૂપ (પગલાંની દેરી) કરાવ્યો અને તેની પાસે પોતાના નવાણું ભાઈઓના પણ સ્તૂપ કરાવ્યા. ત્યાં આવનારા પુરુષો ગમનાગમન વડે એની આશાતના ન કરે એવું ધારીને લોઢાના યંત્રમય આરક્ષક પુરુષો તે ઠેકાણો ઊભા રાખ્યા. એ યંત્રમય લોઢાના પુરુષોથી જાણે મર્ત્યલોકની બહાર તે સ્થાન રહ્યું હોય એમ મનુષ્યોને અગમ્ય થઈ પડ્યું. પછી ચક્વર્તીએ દંડરત્ન વડે તે પર્વતના દાંતા પાડી નાખ્યા. તેથી સરલ અને ઊંચા સ્તંભની પેઢે એ પર્વત લોકોથી ન ચડી શકાય તેવો થઈ ગયો. પછી મહારાજાએ એ પર્વતની ફરતા મેખલા જેવા અને મનુષ્યોથી ઉલ્લંઘન થઈ શકે નહીં એવા એક એક યોજનને અંતરે આઈ પગથિયાં બનાવ્યાં. ત્યારથી એ પર્વતનું નામ અષ્ટાપદ પડ્યું અને લોકોમાં તે હરાદ્રિ, કૈલાસ અને સ્ફિટિકાદ્રિ એવા નામથી પણ ઓળખાવા લાગ્યો.

એવી રીતે ચૈત્ય નિર્માણ કરી, તેમાં પ્રતિષ્ઠા કરી, ચંદ્ર જેમ વાદળમાં પ્રવેશ કરે તેમ શેત વસ્તુ ધારણ કરી ચક્વર્તીએ તેમાં પ્રવેશ કર્યો. પરિવાર સહિત પ્રદક્ષિણા કરી મહારાજાએ પ્રતિમાઓને સુગંધી જગથી સ્નાન કરાવ્યું. પછી માર્જન કર્યું, એટલે તે પ્રતિમાઓ રત્નના આદર્શની પેઢે અધિક ઉજ્જવલ થઈ. પછી ચંદ્રિકાના સમૂહ જેવા નિર્મળ, ગાઢ અને સુગંધી ગોરુંચંદનના રસથી વિલેપન કર્યું તથા વિચિત્ર રત્નોના આભૂષણ, ઉદામ દિવ્યમાળાઓ અને દેવદુષ્ય વસ્ત્રોથી અર્ચન કર્યું. ધંટા વગાડતા મહારાજાએ તેઓની પાસે ધૂપ કર્યો, જેના ધૂમાડાની શ્રોણીઓથી એ ચૈત્યનો અંતર્માં જાણે નીલવલ્લીથી અંકિત હોય તેવો જણાવા લાગ્યો. ત્યાર પછી જાણે સંસારરૂપી શીતથી ભય પામેલાને માટે જીવલંતો અશ્રિકુંડ હોય તેવી કર્પૂરની આરતી ઉતારી.

એવી રીતે પૂજન કરી, ઋષભ સ્વામીને નમસ્કાર કરી, શોક અને ભયથી આકાંત થઈ ચક્વર્તીએ આ પ્રમાણે સ્તુતિ કરી-

* અષ્ટાપદના જિનમાસાદની અંતર્ગત ચોવીશ જિનેશ્વરોની સ્તુતિ :

કલ્લાણપંચણહિં, નેરઝ્યાણં પિ દુક્ખતવિયાણં ।

દિણણસુહસ્સ સુહાગર ! નમો તુમં તિજગદીસસ્સ ॥

હે જગત્સુખાકર ! હે ત્રિજગત્પતિ ! પાંચ કલ્યાણકથી નારકીઓને પણ સુખ આપનાર એવા આપને હું નમસ્કાર કરું છું.

સામિય ! જગહિયકારગ ! વિહરંતેણ તએ ઇમં વિસ્સં ।

દિણવઙ્ણા વિવ નિહિલં, અણુગાહિયમેત્થ તમગસિયં ॥

હે સ્વામિન् ! સૂર્યની પેઢે વિશ્બનું હિત કરનારા તમે હુંમેશાં વિહાર કરીને આ ચરાચર જગત ઉપર અનુગ્રહ કર્યો છે.

અઞ્જાણજજણાણં, વિહરંતો તું સયા સમસુહાય ।

भवओ पवणस्स य तह, परोवयाराय होज्ज गई ॥

आर्य अने अनार्य-એ બંને ઉપરની પ્રીતિથી તમે ચિરકાળ વિહાર કરતા, તેથી પવનની અને તમારી ગતિ પરોપકારને માટે જ છે.

અણેસિં વિહરંતો, ઉવયરિં આસિ દીહકાલમિહ ।

ઉવયારાય હિ ભયવં, મુત્તીએ કાસ સમુવગાઓ ॥

હે પ્રભુ ! આ લોકમાં મનુષ્યોનો ઉપકાર કરવાને માટે તમે ચિરકાળ વિહાર કર્યો હતો, પણ મુક્તિમાં તમે કોનો ઉપકાર કરવાને માટે ગયા ?

ભવયા અહિદ્વિય જં, લોયગં અજ્જ લોગવરમાસી ।

મચ્ચુપહાણો લોગો, તુમઙ વિણ એસ સંજાઓ ॥

તમે અધિષ્ઠિત કરેલું લોકાશ્ર (મોક્ષ) આજ ખરેખર લોકાશ્ર થયું છે અને તમે છોડી દીઘેલ આ મર્ત્યલોક ખરેખર મૃત્યુલોક (મૃત્યુ પામવા યોગ્ય) થયો છે.

અજ્જવિ સક્ખમસિ તુમ, તેસિં સબ્ભાવભૂસિય ભવીણ ।

લોગાણુગાહકરણિ, સરતિ જે દેસણ તુમ્હ ॥

હે નાથ ! જેઓ વિશ્વને અનુગ્રહ કરનારી તમારી દેશનાને સંભારે છે તે ભવ્ય પ્રાણીઓને હજુ પણ તમે સાક્ષાત જ છો.

રૂવત્થં પિ જણા જે, જિણિંદ ! જ્ઞાણં તુમમ્મિ જુંજાંતિ ।

પચ્ચકખમેવ તાણં, જોગીણ પિ ભયવં તું સિ ॥

જેઓ તમારું રૂપસ્થ એવું ધ્યાન કરે છે તેવા મહાત્માઓને પણ તમે પ્રત્યક્ષ જ છો.

પરમેસર ! સંસાર, જહા અસેસં ચિહ્નથ દુહભરિય ।

તહ નિમ્મમોવિ ચિત્તં, ન ચયસુ કયાવિ મમ નૂણ ॥

હે પરમેશ્વર ! જેવી રીતે ભમતારહિત એવા તમે આ સર્વ સંસારનો ત્યાગ કર્યો તેવી રીતે હવે કદાપિ મારા મનનો ત્યાગ કરશો નહીં.

ઝા થુણિઝુણ ઉસહં, પહું તાઓ જિણવરે ય અણે વિ ।

નમિં નમિં ભરહો, પત્તેં વળિં લગ્ણો ॥૧॥

એવી રીતે આદીશ્વર ભગવંતની સ્તુતિ કરીને ભરત બીજા દરેક જિનેશ્વરોને નમી-નમીને પ્રત્યેકની સ્તુતિ કરવા લાગ્યા. ૧

વિસયકસાયા અજિઅં, વિજયામાયર સુકુકિખવરહસં ।

જિયસત્તુનરિંકસુયં, નમામિ અજિયં અજિયનાહં ॥૨॥

વિષય કષાયથી અજિત, વિજયામાતાની કુક્ષિમાં માણિક્યરૂપ અને જિતશત્રુ રાજના પુત્ર હે જગત્સ્વામી અજિતનાથ ! તમે જય પામો. ૨

ભવગયણ પારગમણે, સૂરં સેણોયરસ્સ વરસ્યણં ।

નરવિજિયારિજાયં, સંભવજિણાહમરિહામિ ॥૩॥

સંસારરૂપી આકાશનું અતિક્ષમણ કરવામાં સૂર્યરૂપ, શ્રીસેનાદેવીના ઉદરથી ઉત્પન્ન થયેલા અને જિતારી રાજના પુત્ર-એવા હે સંભવનાથ ! તમને હું નમસ્કાર કરું છું. ૩

संवरकंसाभरणं, देवो सिद्धत्थपुब्बदिसिभाणू ।
अभिनंदणजिणयंदो, हणेत सह अम्ह दुरियाइं ॥४॥

संवर राजना वंशमां आभूषणशृङ्, सिद्धार्था देवीशृपी पूर्व दिशामां सूर्य समान अने विश्वने आनंदायी
ऐवा हे अभिनंदनस्वामी ! तमे अमने पवित्र करो. ४

जय मंगलामणकुमुय-चंदो मेहण्णयावणि जलहरो ।
सुमई जिणिंदणाहो, जो भवियजण-मण-दुहहरणो ॥५॥

मेघराजना वंशशृपी वनमां भेघ समान अने भंगामाता शृपी भेघमालामां भोतीशृप ऐवा हे सुभतिनाथ !
हुं तमने नमस्कार करुं छुं. ५

सामि ! धरनरिंदजलहि-सोम ! सुसीमासरोवरसरोय ! ।
पउमप्पह- तित्थयरो !, तुब्धं सययं नमो अत्थु ॥६॥

धरराजा शृपी जमुद्रने चंद्र समान अने सुसीमादेवी शृपी गंगा नदीमां कमलसमान ऐवा हे पद्मप्रभु !
तमने हुं नमस्कार करुं छुं. ६

जिणवर-सुपास ! रक्खसु, पुढवीमलयम्मि चंदणसरिच्छ ! ।
सिरियपइट्टनिवकुलाऽहारवरत्थंम ! अम्हे वि ॥७॥

श्री प्रतिष्ठ राजना कुण्डशृपी गृहना प्रतिष्ठास्तंभशृप अने पृथ्वी भाताशृप भलयाचलमां चंदन समान
हे सुपार्थनाथ ! मारी रक्षा करो. ७

महसेणकुलमयंको !, लक्खमणाकुकिखमाणसमराल ! ।
भयवं चंदप्पहजिण !, तारसु अम्हे भवोदहिओ ॥८॥

महासेन राजना वंशशृपी आकाशमां चंद्र समान अने लक्ष्मणा देवीनी कुक्षिशृपी सरोवरमां हुंस समान
ऐवा हे चंद्रप्रभु ! तमे अमारी रक्षा करो. ८

सुग्णीवतण्य ! रामा-देवी-णंदणवणुव्विकप्पतरू ! ।
सुविहिजिणो मज्ज दिससु, परमपयपयासगं मग्गं ॥९॥

सुग्रीवराजना पुत्र अने श्रीरामादेवी शृप नंदनवननी भूमिमां कल्पवृक्ष शृप ऐवा हे सुविधिनाथ !
अमारुं शीघ्र कल्याण करो. ९

सिरिसीयलो जिणेसो, नंदादेवीमणं बुहि-मंयको ।
ददरहनरिंदतणओ, मणवंछियदायगो मज्ज ॥१०॥

दृठरथ राजना पुत्र, नंदादेवीना हृदयना आनंदशृप अने जगतने आळालाई करवामां चंद्रसमान ऐवा
हे शीतणस्वामी ! तमे अमने हर्षकारी थाओ. १०

सिरिविण्हु माउतणओ, विण्हुनरिंदकुलमोत्तियाभरणं ।
नीसेयससिरिमणो, सिज्जंसो देउ मे मोक्खं ॥११॥

श्री विष्णुदेवीना पुत्र, विष्णु राजना वंशमां भोती समान अने भोक्षशृप लक्ष्मीना भरथार ऐवा
हे श्रेयांसप्रभु ! तमे कल्याणने भाटे थाओ. ११

वसुपुज्जनरिंदसुओ, माइजयाहिययपंकयाइच्चो ।
अरिहंतवासुपुज्जो, सिमस्सिरि दिज्ज भव्वाणं ॥१२॥

वसुपूज्य राजना पुत्र, जयादेवी रूप विद्वर पर्वतनी भूमिमां रत्नरूप अने जगतने पूज्य ऐवा
हे वासुपूज्य ! तमे भोक्ष लक्ष्मीने आपो. १२

सामाणण-वरचंदो, कयवम्मनरिंदसागरससंको ।
अरिहो विमलजिणेसो, हियं विमलं महंकुणउ ॥१३॥

झृतवर्मा राजना पुत्र अने श्यामादेवी रूप शभी वृक्षमांथी उत्पन्न थयेल अग्निसमान ऐवा
हे विभक्तस्वाभी ! तमे अभारु भन निर्भण करो. १३

सिरिसिंहसेणनरवइ-कुलमंगलदीवगो अणंतजिणो ।
सुजसादेवीसूण्, वियरसु अम्हं सुहमणंतं ॥१४॥

सिंहसेन राजना कुणमां भंगणदीपक अने सुयशा देवीना पुत्र हे अनंत भगवान् ! तमे अनंत सुख
आपो. १४

भाणुनिवहिययचंदो, सुवयापुव्वायलेसउसिणंसू ।
धम्मजिणेसो भयवं, विहेउ धम्मे महं मज्जा ॥१५॥

सुव्रता देवीरूप उद्याचणनी तटीमां सूर्यरूप अने भानुराजना पुत्र ऐवा हे धर्मनाथ प्रभु ! तमे धर्मने
विषे भारी बुद्धि स्थापन करो. १५

सिरिसंतिनाहजिणवर ! अहरादेवीवरंगओ भवसु ।
निववीससेणकुलणह- चंदो ! भवियाण संतिगरो ॥१६॥

विश्वसेन राजना कुणमां आभूषण रूप अने अधिरा देवीना पुत्र-हे शांतिनाथ भगवान् ! तमे अभारा
कर्मनी शांतिने भाटे थाओ. १६

सिरिकुंथुनाह ! भयवं ! सूरनरिंदकुलगयणतिमिरारी !
सिरिजणणी- कुकिखमणी !, जएसु उम्महियमयणमओ ॥१७॥

शूर राजना वंशरूप आकाशमां सूर्य समान, श्रीदेवीना उदरथी उत्पन्न थयेला अने कामदेवनुं उन्मथन
करनारा-हे जगत्पति कुंथुनाथ ! तमे जय पामो. १७

देवीमाणसहंसो, सुदंसणनरिंदचित्तघणमोरो ।
तित्थयरो अरणाहो, देउ मम भवुत्तरणवरयं ॥१८॥

सुदर्शन राजना पुत्र अने देवी मातारूप शरद् लक्ष्मीमां कुमुद समान ऐवा हे अरनाथ ! तमे भने
संसार तरवा रूप वैभवने आपो. १८

कुंभनरेससमुद्दाऽमयकुंभो, मल्लिनाहजिणचंदो ।
देविपहावइजाओ, दिसउ सिवं कम्मखयमल्लो ॥१९॥

कुंभराजरूप समुद्रमां अमृतकुंभ समान, अने कर्मक्षय करवामां महाभल्ल समान ऐवा प्रभावती देवीथी
उत्पन्न थयेला हे भविलनाथ ! तमे भोक्षलक्ष्मी आपो. १९

पउमावइ देवीसुअ ! सुमित्तहिमवंतपोम्मदहरूवो ! ।
मुणिसुब्बयतिथेसो ! पणई अम्हाण तुम्ह सिया ॥२०॥

सुमित्र राज्ञपी लिमाचलमां पञ्चदण्ड समान अने पचावती देवीना पुत्र-हे मुनिसुव्रत ग्रभु ! तमने हुं नमस्कार करुं छुं. २०

वप्पादेवीरोहण-गिरिरथण ! विजयनरिंदकुलदीव !
विस्सनमंसियपयकय ! नमिजिणवर ! देसु मत्तिसुहं ॥२१॥

वमादेवीरूप वज्ज्ञाणनी पृथ्वीमां वज्ज्ञमान, विजयराजना पुत्र अने, जेमनां चरणकमण जगतने नमस्कार करवा योग्य छे ऐवा हे नमिग्रभु ! तमने नमस्कार करुं छुं. २१

अरिहा अरिहुनेमी, समुद्भूवह समुद्धरयणीसो ।
असिवाणि सिवासूण, हरेउ भवियाण नमिराण ॥२२॥

समुद्र (विजय)ने आनंद करवामां चंद्ररूप, शिवादेवीना पुत्र अने परम दयाणु ऐवा हे भोक्षगामी अरिष्टनेमि भगवंत ! तमने हुं नमस्कार करुं छुं. २२

पासजिणीसरदेवो, वामाणनंदणो पसंतगिरो ।
रायाऽससेणतणुओ, विघ्नहरो होज्ज अम्हाण ॥२३॥

अश्वसेन राजना कुणमां चूडाभिण्डूप अने वामादेवीना पुत्र-ऐवा हे पार्वनाथ ! तमने नमस्कार करुं छुं. २३

सिद्धत्थभूवतणओ, तिसलाहियसररायहंससमो ।
चरमजिणेसो वीरो, अणंतमकखयपयं देज्जा ॥२४॥

सिद्धार्थ राजना पुत्र, त्रिशला भाताना हृदयना आश्वासरूप अने सिद्धि ग्रामिना अर्थने सिद्ध करनारा हे महावीर ग्रभु ! तमने वंदन करुं छुं. २४

ऐवी रीते प्रत्येक तीर्थकरने स्तुतिपूर्वक नमस्कार करीने महाराजा भरत ए सिंहनिध्या चैत्यनी बहुर नीक्ष्या अने प्रियमित्रनी पेठे ए सुंदर चैत्यने वांका वणी पाणी नजरे जेतां जेतां अष्टापद पर्वत उपरथी नीये उत्तर्या. पोतानुं भन ते पर्वतमां भग्र थयेलुं होवाथी जाणे वस्त्रनो छेऊ भरायो होय तेम अयोध्यापति मंद मंद गतिअे अयोध्या तरफ चाल्या. शोकना पूर्नी जेम सैन्यथी उडेली २४ वडे दिशाओने आकुण करता-शोकार्त यक्की अयोध्यानी सभीपे आवी पहुँच्या जाणे यक्कीना सहोदर होय तेम तेमना दुःखी अन्यंत दुःखी थयेला नगरजनों आश्रुटिए जेयेला महाराजाए पोतानी विनीतानगरीमां ग्रवेश कर्या. पछी भगवंतने संभारी संभारीने वृष्टि पछी अवशेष रहेला मेघनी पेठे अशुज्जना बिंदुने वरसावता तेओ पोताना राजमहेलमां पेठा. द्रव्य उराण थयेल पुरुष जेम द्रव्यनुं ज ध्यान कर्या करे, तेम ग्रभुरूपी धन उराण थयाथी तेमाणे उभा रहेता, चालता, सूता अने जागता, बहुर ने अंदर रातदिवस ग्रभुनुं ज ध्यान करवा मांडयुं. बीजा हेतुथी पाण पोतानी पासे अष्टापद पर्वत तरफथी आवनारा पुरुषोने, तेओ जाणे पूर्वनी पेठे ग्रभुने भाटे कांઈ कहेवा आव्या होय तेम मानवा लाग्या.

